प्रेम पयाम

योगेन्द्र प्रसाद 'योगी'

PREM PAYAM

YOGENDRA PRASAD 'YOGI
1903-1994
GOPALGANJ, Bihar, India

Compilation of Hindi Poetry

Tel: +919709999861
E-mail:
yashendra108@gmail.com

Published in 1978 by Rajkamal



कवि : व्यक्ति चित्र

गोपालगंज के यशस्वी विधि-व्यसायी और वर्चस्वी कलाकार श्री योगेन्द्र प्रसाद 'योगी' एम. ए., बी. एल. बहिर्मुखी अधिवक्ता और अन्तर्मुखी कवि हैं । एक तो विधि-व्यवसाय के कार्य-भार ने उन्हें इतना व्यस्त बना दिया है कि वे अपनी कवि-प्रतिभा को यथेष्ट समय दे नहीं पाते; दूसरे, उनकी दर्शनोन्मुखी प्रवृत्ति अपने में प्रचारात्मक सक्रियता का समावेश नहीं कर पाती; किंतु फिर भी, उनके समय का जो भी अल्पांश उनके कवि-कर्म को सुलभ होता है वह उनकी प्रतिभा-प्रभा को बिखेरने के लिए यथेष्ट है ।

अन्तर्मुखी कवि होने का यह अर्थ नहीं कि 'योगी' जी साहित्यिक-सांस्कृतिक मंच पर आते ही नहीं । वे तो गोपालगंज के सार्वजनिक जीवन के अन्यतम उद्भावक हैं। गोपालगंज की तुलसी-साहित्य-समिति और ब्रह्म-विद्या-भवन उनकी साहित्यिक और दार्शनिक प्रवृत्तियों के प्रतीक हैं, जिनके निर्माण में उन्होंने अपना तन-मन-[redacted] लगाया है। अंजुमन-ए-तरक्की-ए-उर्दू, बार एसो[redacted] गोपालगंज कालेज का शासी-निकाय, स्थानिक विद्यालय[redacted] प्रबंध-समितियाँ, लोकलबोर्ड, नोटिफायड एरिया कमेटी [redacted] दर्जनों संस्थाओं के सदस्य, मंत्री, उपाध्यक्ष और अध्यक्ष के पदों को

समय-समय पर सुशोभित करनेवाले 'योगी' जी ने गोपालगंज के सार्वजनिक जीवन को बहुश: उन्नीत किया है; किंतु जहाँ तक उनके कवि का संबंध है, वे अन्तर्मुखी कलाकार है । [सिवान गोपालगंज जिला हिन्दी साहित्यि सम्मेलन के अध्यक्ष भी रह चूके हैं ।

'योगी' जी को हिन्दी, उर्दू और अंग्रेजी पर समान अधिकार प्राप्त है । अंग्रेजी साहित्य तो उनके अध्ययन का मुख्य विषय ही रहा है । लेखन-कर्म के लिए उन्होंने हिंदी और उर्दू को समान भाव से अपनाकर अपने लिए जिस मिली-जुली शैली का विकास किया है, वह अत्यंत प्रसादमयी और प्रवाहमयी है । मुहावरेदार भाषा में सहज चुटीली अभिव्यंजना 'योगी' जी की विशेषता है । अनुभूतियों की गहराई में उतरता हुआ उनका अन्तर्मुखी कवि, जीवन की मर्म-वाणी बोलता है ।

साहित्य, दर्शन और विधि की त्रिवेणी में अभिषिक्त श्री योगेन्द्र प्रसाद 'योगी' के वयोवृद्ध व्यक्तित्व से समाज को और साहित्य को जो अवदान मिल रहे हैं वे उनकी प्रतिभा के ही अनुरूप हैं ।

पाण्डेय कपिल

(सारण जिला हिन्दी साहित्य सम्मेलन

द्वारा प्रकाशित

"सारण्यक" से उद्धृत)

जन्म तिथि : २० जून १९०३

घर : भटकन, पो० जीरादेई, सारण

वर्तमान पता : जिला सरकारी अधिवक्ता,
गोपालगंज (बिहार)

प्रेम पयाम

योगेन्द्र प्रसाद 'योगी'

जिन्दगी, उफ़ ! दो घड़ी जीने के लिए मांग
वक्त से; और फुर्सत सीने के लिए मांग
चादरे तकदीर को; कैदे मयखाना क्यों,
हक, हर जगह बैठकर पीने के लिए मांग

—योगी

दो शब्द

मैं उस इत्तफाक के प्रति शुक्रगुजार हूँ, जिसकी प्रेरणा से, 'प्रेम पयाम' आपके हाथों तक पहुँच सका। मेरे अनेक अन्तरंग मित्रों ने, हमेशा ही, मेरी रचनाओं के प्रकाशन की सलाह दी, मैं उन सबका आभारी हूँ। और इसमें, आप जैसे कविता-प्रेमी पाठकों का योगदान भी कम नहीं है।

शायरी मेरा व्यवसाय नहीं, स्वभाव रहा है। लगभग ५० वर्षों के व्यस्त अधिवक्ता के व्यवसाय के बहाव में खिंच कर, मैं जीवन की एक ऐसी मोड़ पर आ अटका था, जहाँ पहुँचकर सामान्यत: कविता या शायरी की दिशाएँ अवरुद्ध सी हो जाती हैं। फिर भी, मैंने अपने जीवन को इसका अपवाद पाया है। मेरे अवकाश के क्षण, हमेशा ही दर्शन, अध्यात्म और कविता की प्रेरणा से गुंजित रहे हैं। वस्तुत: मेरी रचनाएं, स्वांत: सुखाय की दृष्टि से ही रची गईं, अत: किसी महत्वाकांक्षा की पूर्त्ति के ये साधन नहीं रही हैं, और यही कारण है, कि 'प्रेम पयाम' आपके हाथों तक पहुँचने में बहुत पीछे रहा है। आपके पास जा भी रहा है, तो केवल इस ख्याल से कि इसके जो अंश दार्शनिक जीवन के कटु सत्य हैं, जीवन और मरण के बीच प्रेममय अटूट सम्बन्ध के प्रतीक हैं, और प्रकृति की सृजनकारी एवं विध्वसंकारी शक्तियों के बीच अनन्यता के द्योतक हैं, वे आपके क्षणों को भी, मेरी ही तरह, ओत–प्रोत कर सकें। ऐसा ख्याल भी एक बड़ा ख्याल कहा जा सकता है, अत: मैं इतने से भी संतोष कर लूंगा, यदि ये मेरी तन्हाई की कैद से हटकर, आपकी दुनिया में जैसे तैसे विचर सकें।

'अमर पिपासा' और 'जीवन सागर' एक दूसरे की पूरक कविताएँ हैं, यद्यपि वे अलग–अलग प्रतीकों के साथ प्रस्तुत हैं। मैंने जीवन को जड़ से चेतन तक, मनुष्य से ईश्वर तक, एक ही अनुभूति के विस्तार के रूप में देखा है, जिसकी सीमा रेखा अंकित नहीं हो पाती। अत: 'जीवन सागर' 'अमर पिपासा' के लिये जीवन-सम्बल है। 'मृत्यबाला', जीवन में मृत्यु की बांछनीयता को वैसा ही साकार करने का एक प्रयास है, जैसा कि इन्द्रधनुषीय रंगें बच्चों के खिलवाड़ के लिए, कभी कभी, बन जाया करते हैं।

'नीरदबाला' के विषय में, केवल इतना कहना चाहूँगा कि जीवन का यह प्रतीक हमारी आँखों से हमेशा ही गुजरता आया है, किन्तु, त्याग और प्रेम के अटूट सम्बन्ध के रहस्यमय स्वरूप को जिस तरह इसने मेरे सम्मुख खोला है, वह आप तक भी पहुँचा सकूँ, ऐसा ख्याल स्वभावत: चला आया है। 'बसंत से' और 'आज[illegible] कविताएं संभवत: परम्परागत औपचारिकताएँ तोड़ देती हैं। बसन्त को [illegible]ष्ट', 'बवंडर और 'बागी' संबोधित करने के लिये, मैं बसन्त के प्रेमी पाठकों से क्षमा प्रार्थी हूँ। 'आजादी' में वर्त्तमान की उपेक्षा का भाव बहुत तीखे रूप से आया है, किन्तु

ऐसा आपकी संवेदना को कुंठित करने के ख्याल से कदापि नहीं चित्रित है। 'कोयल' को मैंने एक भिन्न नजर से देखने का प्रयास किया है। 'बापू की राख' उन अवसाद पूर्ण क्षणों का परिणाम है, जो विसर्जन के तत्काल बाद, उन्माद के रूप में, मेरे मानस पटल पर उमड़-घुमड़ थे।

कवि सामान्यतः कविताओं के विषय में कुछ कहना नहीं चाहता, किन्तु मेरी रचनाएँ, ५० वर्षों की लम्बी अवधि में लिखी गईं, अतः दो एक शब्द भी देना आवश्यक लगा। सभी रचनाओं के साथ रचना--काल विषय सूची में ही दे दिया गया है, ताकि समय का संदर्भ पाठकों के साथ हो। प्रेम, आजादी और मानवता मेरी कविताओं की मंजिलें रही हैं। इन मंजिलों पर पहुँचकर भी किसी ठहराव की कल्पना भी असह्य है; वैसे मुझे मंजिल हमेशा दूर नजर आई है।

साहित्यकारों की गोष्ठी में 'प्रेम पयाम' देते बड़ा संकोच हो रहा है। भाषा, प्रतीक और दृष्टि बिन्दु आपके साथ-साथ चल सकें, ऐसे प्रयत्न में, मैं किसी सफलता का दावा नहीं कर सकता, किन्तु 'प्रेम पयाम' की आवाज आपतक पहुँचाने में, मेरी भाषा और प्रतीक बाधक नहीं रहे, इसका मुझे संतोष भी है।

अन्त में, मैं, स्कूली छात्र, श्री अजय कुमार के प्रति आभार व्यक्त करना चाहूँगा जिसने इन रचनाओं की पांडुलिपि तैयार की। मैं अपनी पौत्री अरुणिमा के मनोयोग का भी कायल हूँ, जिसने प्रेस की प्रूफों का शुद्धिकरण किया। मेरे पुत्र डा० राय अखिलेन्द्र प्रसाद (रीडर एवं अध्यक्ष, राजनीति विभाग, राजेन्द्र कालेज, छपरा) ने इस रचना के प्रकाशन का संपूर्ण दायित्व उठा कर, मेरा कार्य बहुत हल्का कर दिया।

योगी

विषय-सूची

२९ पागल (१९३७)

३० जवानी से (१९६२)

३१ विजयध्वजा (१९४७)

३२ कृष्ण (१९४६)

३३ जिन्दगी (१९४९)

३४ होली (१९३८)

३५ मसीहा (१९४७)

३६ आह्वान (१९३०)

३७ जवाहर लाल (१९३०)

३८ नमक सत्याग्रह (१९३०)

३९ तुलसी (१९३८)

४० होके रहा (१९७२)

४१ गजल (१९५०)

४२ मुक्तक (........)

४३ गजल (१९४८)

४४ गजल (१९५२)

४५ गजल (१९५६)

४६ गजल (१९६०)

४७ गजल (१९७०)

अमर पिपासा

(१)

राही दूर सफर का प्यासा, कबसे थका हुआ चलता हूँ ।
अन्तर मेरा शून्य भरा, इक दर्द लिए अविरत फिरता हूँ ।
जान न पाता, क्यों त्रिभुवन के कोने-कोने भटक रहा हूँ ।
जीवन की अनहद बिसात पर, विवश बना हूं, लुढ़क रहा हूँ ।
बुझने की है नहीं कभी भी, अन्तर की यह अमर पिपासा ।
युग-युग से ढोता आता हूँ, मंजिल-मंजिल ठोकर खाता ।

(२)

कभी चमन की शोभा मैं था, जब रंग बिरंगा फूल बना ।
प्रकृति देख मुझे हर्षाई, औ' दिग् दिगंत अनुकूल बना ।
धरती को हरियाली मैंने, मस्ती मैंने, प्याली मैंने,
दी गुलशन को लाली मैंने, बख्शी अदा निराली मैंने ।
तरु को नव हरित वसन मैंने, औ' गुलशन को यौवन मैंने,
सुन्दरता, नवजीवन, मैंने, दिया धरा को उपवन मैंने ।
विहंगों ने गुणगान किया मेरा, भ्रमरों ने रसपान किया ।
माली ने देख मुझे, नित मुदित हृदय से साँझ-विहान किया ।
सुन्दरता ने बाल सजाया, मुझे गले का हार बनाया ।
और बना कानों की बाली, मुझसे कितना प्यार जताया ।
पवन मुझे नित चूम रहा था, मैं डालों पर झूम रहा था ।
निकट अगोचर, पर पतझड़ भी, अंतरिक्ष में घूम रहा था ।
हा, मैं सूख गया शाखों पर, गिरा धरा पर कर मर्मर ।
हंसती चली विहग की टोली, हंसते तरुवर रहे दिगंबर ।
मेरा तन सूखा मरा पड़ा था, लेकिन जीवन हंसता था ।
जीवन हंसता था, यौवन हंसता था, औ' गुलशन हंसता था ।
सूखा नंगा निर्लज गुलशन और हवायें भी हंसती थीं ।
जिन बालाओं का सौरभ मैं, वे बालायें भी हंसती थीं ।

राही दूर सफर का प्यासा, कबसे थका हुआ चलता हूँ ।
अन्तर मेरा शून्य भरा, इक दर्द लिए अविरत फिरता हूँ ।

(३)

कभी चला इठलाता नभ पर, मैं उमड़-घुमड़ बादल बनकर ।
कंचन की ढेरी, रजत राशियाँ दल-का-दल अविरल बनकर ।
रंग-रंग की ओढ़ा-सारी, नभ मंडल ने मुझे पिन्हाई ।
नाच नचाया साथ पवन के, अद्भुत मनहर रास रचाई ।
सूर्य-किरण से चरण पखारा, शुभ्र चाँदनी में नहलाया ।
कुंतल गूँथे तारक-मोती और तड़ित से माथ सजाया ।
तारे लोट गए ऐसा मुझपर, भूल गए चमचम अपनी ।
चाँद नियति पथ को भूला और, छिपाता चला, शरम अपनी ।
आख मिचौनी, नित अलबेली, धूप-छाँह ने मुझसे खेली ।
मैं पुलकित, उड़ता चला गगन पर, मची अलौकिक रंगरेली ।
मेरा नख-सिख चूम रहा था नभमंडल, मैं झूम रहा था ।
दूर नहीं पर, मेरा दुर्दिन अंतरिक्ष में घूम रहा था ।
पिघल-पिघल हा मेरा तन, गिरा धरा पर पानी बन-बन ।
भंग हुआ मेरा सुख-सपना, जाग उठा फिर मेरा क्रंदन ।
मेरे क्रंदन पर बिजली भी हँसती थी, हँसता था जीवन ।
औ' नंगे तारे हँसते थे, हँसता था मुझपर क्रूर पवन ।
इक आह न की नभवालों ने, औ' आँख किसी की नम न हुई ।
पल भर न थमी तारों की चालें, चमक किसी की कम न हुई ।
मैं था, मेरी निष्फलता थी, और न कोई संगी साथी ।
चाहा, उसका आंचल पकड़ूँ; देखा, भाग चली आशा थी ।
राही दूर सफर का प्यासा, कबसे थका हुआ चलता हूँ ।
अन्तर मेरा शून्य भरा, इक दर्द लिए अविरत फिरता हूँ ।

(४)

कभी मिला मुझको मानव-तन, बसुधा में जय जयकार उठा ।
नतमस्तक हो मेरी अगवानी में सारा संसार उठा ।
नक्षत्रों ने दीप दिखाये, नभवासी ने फूल गिराये ।
सागर ने चरणों को धोया, सूर्य चन्द्र चाकर बन आये ।

बिजली बाँदी बन हर्षाई, निधियाँ दे पृथ्वी इतराई ।
दसों दिशाओं ने यश गाया, देवों ने मेरी पूजा की ।
जल-थल नभ पर मेरा शासन, मेरे इंगित पर परिवर्त्तन ।
मेरे नन्हें से कर तल पर, नाच रहा था विश्व चिरन्तन ।
सांसों में अमरत्व लिये था, बाँहों में वीरत्व लिये था ।
विचर रहा था मैं धरती पर आँखों में अजरत्व लिये था ।
अन्तर में लेकिन प्यार उठा, उर-सरि में नूतन ज्वार उठा ।
झंकार उठी मृदु वीणा की, इक प्रणय भरा संसार उठा ।
यह कैसा हाहाकार उठा औ' आँखों में उद्गार उठा ।
इक नयी समस्या खड़ी हुई, जैसे उर में यह प्यार उठा ।
तस्वीर बनाई प्रियतम की, औ' रंग-रूप आकार दिया ।
दान दिया अतुलित सुन्दरता, मैंने अपना संसार दिया ।
अधिकार दिया पग पर उसके, अपने प्राणों को वार दिया ।
बेड़ी निजकर डाली, प्रिय के कर अपना जीवन भार दिया ।
यौवन दे दे, मस्ती ढूंढ़ी, जीना सीखा, जान गंवाकर ।
और किसी के मुस्कानों पर, सरबस अपना किया निछावर ।
प्यार किया पर प्यार न पाया, सपने का संसार न पाया ।
सुख का पारावार कहाँ का, जीने का आधार न पाया ।
जलने का विस्तार न पाया, रोने का अधिकार न पाया ।
प्यार करे मुझसे भी कोई, ऐसा तो इक बार न पाया ।
राही दूर सफर का प्यासा, कबसे थका हुआ चलता हूँ ।
अन्तर मेरा शून्य भरा, इक दर्द लिये अविरत फिरता हूँ ।

(५

कभी बनाया सोने का घर, नाव मंगाई मोती भर-भर ।
हीरे का अंबार लगाया, कोने-कोने भरे जवाहर ।
देश-देश के लूट खजाने, दूर-दूर की निधियाँ लाई ।
ली उतार अलका धरती पर; बढ़ती चली अतुल प्रभुताई ।

मूँद चला लेकिन जब आँखें, हँसते थे महलों के मोती ।
जाग रहे थे दिग् दिगंत, केवल मेरी किस्मत थी सोती ।
लाद चला कंधे पर मुझको, धूमधाम में हँसता जीवन ।
हँसती बढ़ी चिता की लपटें, हँसता तन का लिपटा चंदन ।
नाच रहा मरघट, परिवर्त्तन, हँसता, जनरव भी हँसता था ।
अजब समा थी बँधी हुई, जलता मेरा शव भी हँसता था ।
हँसने का आभास छिपा था, गिरते आँसू के कण-कण में ।
हँसने की आवाज छिपी थी, बीबी-बेटे के क्रंदन में ।
घुलकर कलरव बोल रहा था, जलती लकड़ी के ईंधन में ।
जीवन का अट्टहास छिपा था, शव में मेरे, मूक निधन में ।
राख बनी, कुछ धुँआ बना, यों मिटती चली निशानी मेरी ।
काल चक्र के एक फेर से, ओझल हुई कहानी मेरी ।
तारा एक गगन पर टूटा; टूटा, गिरता ही चला गया ।
मूक क्षितिज के ओर-छोर, एकाकी राही चला गया ।
एक घिरी बस नीरवता थी, साथ न कोई संगी साथी ।
निष्फलता का घोर तिमिर था, राह नहीं थी देखी जाती ।
किसको अपनी व्यथा सुनाऊँ, यह चला चली है, चलता हूँ ।
अन्तर मेरा शून्य भरा, इक दर्द लिए अविरत फिरता हूँ ।

(६)

मानव तेरी बस्ती देखी, पग-पग पर मौत खड़ी देखी ।
प्यार जिसे तू कहता जाता, वह बेशर्मी, खुदगर्जी देखी ।
मानव तेरा जीवन देखा, महामर्त्य का नर्त्तन देखा ।
विरह, क्षुधा, अपजस, उत्पीड़न, देखा, दारूण क्रंदन देखा ।
प्यास युगों से ढोता आया, वह प्यास अभी मानव न बुझी ।
आया जो उलझन सुलझाने, वह और बहुत गहरी उलझी ।
यही नहीं था अन्त सफर का, बढ़ता चला, मिली ईश्वरता ।
विश्व-रचैता अमर बना मैं, विश्वंभर आदि पुरूषकर्त्ता ।

भर्ता, त्रिलोक का स्रष्टा मैं, पृथ्वी अंबर का भाग्य विधाता ।
अगजग का, कोटि-कोटि वसुंधरा का, मैं पल-पल निर्माता ।
मैं काल-विजेता, अविनश्वर, मैं अनन्त अनादि परमेश्वर ।
सृजन मेरे उच्छ्वासों पर, संहार इशारों पर निर्भर ।
प्रकृति जड़-चेतन पर, परिवर्त्तन पर, मेरा सुन्दर शासन ।
मैं अजर, चिरंतन, नित नूतन, अलख-निरंजन पुरुष-पुरातन ।
माना, मैं शिव सुन्दर सत् चित, पर क्यों मुझको आनन्द कहा ?
कैसे स्वतंत्र स्वाधीन कहा, कैसे मुझको स्वच्छंद कहा ?
मानव, देव-देवियाँ, किन्नर, किसने देखा मेरा अन्तर ?
किसने मेरी अमिट क्षुधा देखी, किसने मेरी प्यास अमर ?
उर में प्यार लिये फिरता हूँ, इक अंगार लिए फिरता हूँ ।
दुख-भार लिये फिरता हूँ, निशि-दिन निज संहार लिए फिरता हूँ ।
मैं एकाकी, तभी धनी है, मुझमें भी तो घोर कमी है ।
संगिनि, नीरव निर्जनता जब मेरी व्यथा नहीं सुनती है ।
मैं विह्वल होता जाता हूँ, औ' सृजन होता जाता है ।
मैं एकाकी घबड़ाता हूँ, औ' सृजन होता जाता है ।
गाना है बनना अंबर का, रोना है बनना सागर का ।
मेरा सोना, सृजन जड़ का, जगना, सृजन चेतन चर का ।
मेरी मस्ती, कहते जीवन, मेरी सत्ता, विश्व पुरातन ।
मेरे विरह अनल को कहता, यह जग, सूर्य चन्द्र तारागण ।
मैं अपना पंजर सहलाता, जग इसको क़यामत बतलाता ।
कहता प्रलय वृथा, मैं प्रियतम-चित्र बनाता और मिटाता ।
यह मुझको प्रयलंकर कहता, प्रियदर्शन को महशर कहता ।
कैसा यह दीवाना जग है, मुझ दुखिया को ईश्वर कहता ।
राही दूर सफर का प्यासा, कबसे थका हुआ चलता हूँ ।
अन्तर मेरा शून्य भरा, इक दर्द लिये अविरत फिरता हूँ ।

जीवन सागर

(१)

प्यासा राही, प्यासा राही, चलता है क्यों प्यासा राही ?
प्यासा क्यों रहता है राही, जलता है क्यों प्यासा राही ?

पानी तेरे दायें-बायें, पानी तेरे आगे-पीछे ।
चलता है क्यों प्यासा राही, पानी तेरे ऊपर-नीचे ।
आँखें तेरी खुली पड़ी हैं, नित सरिता में जड़ी हुई हैं ।
रहता है क्यों प्यासा राही, होंठ प' लहरें अड़ी हुई हैं ।

पाँव तले गंगा यमुना हैं, सर पर बादल है, वर्षा है ।
जलता है क्यों प्यासा राही, पानी में ही दौड़ रहा है ।
पानी-पानी कहता जाता, पानी में ही दौड़ा जाता ।
पानी से है घिरा हुआ, फिर राही पानी बिन घबड़ाता ।

पीछे दौड़ रहा सिकता के, सरपट कहता जाता पानी ।
पानी पानी पानी पानी, पहचान नहीं पाता पानी ।
तू जान नहीं पाता पानी, ढूँढ़ रहा पानी में पानी ।
भूल रहा जीवन में जीवन, यौवन, मस्ती और जवानी ।

कहता ईश्वर अगम गहन को, मृत्यु बताता परिवर्त्तन को ।
जीवन से तू डरता जाता, कहता खोज रहा जीवन को ।
तू तो भाग रहा जीवन से, खोज रहा फिर जीवन कैसे ?
जीवन निर्भर परिवर्त्तन पर, रोक रहा परिवर्त्तन कैसे ?

ठिकड़ों को कंचन समझा है, जीवन को बंधन समझा है ।
तूने आखिर क्या समझा है, निज को अपना तन समझा है ।
निज को अपना तन समझा, इसलिए नहीं जीवन समझा है ।
प्यार बुझे तो क्योंकर राही, सिकते को जलकण समझा है ।

खुदगर्जी को प्यार समझकर, निज घर को संसार समझकर।
चलता राही तू दृग मूँदे, जीवन को इक बार समझकर।
तन तेरा माना नश्वर, पर तू निज को ही कहता नश्वर।
कहता हास-रुदन जीवन को, अपने को हड्डी का गट्ठर।

भोला राही, भूला राही, ओ राही, ओ प्यासा राही!
दूर चला रस्ते से कितना, पथ कितना सीधा राही?

(२)

देख रहा हूँ तबसे राही, चलता है तू जब से राही।
देखा तेरा ऊपर उठना, देखी तेरी क्रूर तबाही।
मैंने उत्थान पतन देखा, जीवन का संघर्षण देखा।
देखी तेरी अमिट पिपासा, नित उत्पीड़न क्रंदन देखा।

देखा फूल बना भूतल पर तुझको मैंने गिरि अंचल में।
उद्यानों में हंसता था तू, सज बालाओं के कुंतल में।
तू हँसता था, मैं हँसता था, तू फिर डालों पर सूख गया।
तू गिरा धरा पर कर मर्मर, तेरी बिखर गयी पंखुरियां।

तू रोता था, मैं हँसता था, तू जीवन पथ से हटता था।
यह निधन नहीं, उन्मीलन था, विकसन था तू भूल रहा था।
मैं हँसता देख रहा था, तू ही सीमाहीन सुमन फैला था।
नव पौधों का निर्माता, तू ही कोंपल बन था मुस्काता।

गिर कर पराग बनता जाता, उड़कर सुवास बनता जाता।
कलियों के उल्लसित ललाट पर, चढ़कर सुहाग बनता जाता।
पतझड़ में तू झरता जाता, झरकर और संवरता जाता।
अमर सुमन तू सदा अमर था, हँस-हँस मर्मर गान सुनाता।

रोने का अवकाश कहाँ था, तेरा सुमन विनास कहाँ था?
चलता था क्यों प्यासा राही, जीवन का कटुहास कहाँ था?
भोला राही, भूला राही, ओ राही, ओ प्यासा राही।
दूर चला रस्ते से कितना, पथ कितना था सीधा राही।

(३)

देखा था, जब तू था नभ पर, झूम चला इठला-इठलाकर ।
नाच रहा घनघोर घटा बन, शासित तुझसे पृथ्वी अंबर ।
तू हँसता था, मैं हँसता था, फिर देखा मैंने तेरा तन ।
पिघल-पिघल धरती पर गिरता, ओले बनकर क्यों कनकन ।

तू रोता था, मैं हँसता था, तू जीवन पथ से हटता था ।
यह निधन नहीं उन्मीलन था, विकसन था तू भूल रहा था ।
मैंने देखी हस्ती तेरी, शाश्वत सीमाहीन चिरंतन ।
छिपा हुआ परिवर्त्तन में था, तेरा उद्भव औ' नवजीवन ।

देखा तेरे ही जीवन का विस्तार, उदधि तक था फैला ।
तेरा ही आवर्त्तित रूप, सिर्फ थी हरियाली, कानन-सरिता ।
तू हँसता जल के कण-कण में, नाच रहा था अभय पवन में ।
पाँव जलधि, सर और गगन की, उठता जाता सूर्य किरण में ।

रोने का अवकाश कहाँ था, तेरा मेघ विनाश कहाँ था ?
चलता था क्यों प्यासा राही, जीवन का कटहास कहाँ था ?
भोला राही, भूला राही, ओ राही, ओ प्यासा राही ।
दूर चला रस्ते से कितना, पथ कितना था सीधा राही ।

(४)

देखा तेरा मानव जीवन, देखा तेरा अनुपम सृजन ।
देखी तेरी अतुलित विभूति, देखा वह देवों पर शासन ।
देखा तेरा मानव भुजबल, तेरी पृथ्वी, तेरा अंबर ।
तेरी विभुता वैभव देखी, देखा बल विक्रम निशिवासर ।

तू हँसता था, मैं हँसता था, फिर वह भी मैंने दिन देखा ।
तेरा शव, दो गज कपड़े में, सज जीवन के कंधे पर था ।
तू रोता था, मैं हँसता था, तू जीवन पथ से हटता था ।
यह निधन नहीं उन्मीलन था, विकसन था तू भूल रहा था ।

तू तो अच्युत अभय खड़ा था, चिथड़ा कोई पड़ा हुआ था।
वह जो तेरे, तेरी गति के, अन्तर अभी खड़ा पर्दा था।
पहन चुका था तेरा शैशव, पड़ा हुआ था चिथड़ा कोई।
खेल चुका था तेरा बचपन, टूटा हुआ खिलौना कोई।

तेरी हस्ती तरुण खड़ी थी, तोड़ खिलौने फेंक रही थी।
बचपन के अब द्रुतगति आगे बढ़ने की धुन लगी हुई थी।
इसपर क्या रोना, क्या गाना, रहना मंत्र का था जन जाना।
जलता था जो धधक चिता पर, वह तो था परिधान पुराना।

अजर-अमर थी तेरी हस्ती, शव से तेरे दूर खड़ी थी।
रोता था, अज्ञान बिलखकर, तेरी हस्ती विहँस रही थी।
तेरे हित उत्थान खड़ा था, रथ रोके दिनमान खड़ा था।
सुखद इसी परिवर्त्तन में ही, नित तेरा निर्माण खड़ा था।

रोने का अवकाश कहाँ था, तेरा मनुज विनास कहाँ था ?
चलता था क्यों प्यासा राही, जीवन का अट्टहास कहाँ था ?
भोला राही, भूला राही, ओ राही, ओ प्यासा राही।
दूर चला रस्ते से कितना, पथ कितना था सीधा राही।

(५)

किसको तूने प्यार किया था, कब किसका उपकार किया था।
प्यार किया जीवन में मानव, यह दावा बेकार किया था।
कुछ चमड़े से, कुछ पैसे से, जीवन में ऐसे-वैसे से।
मोह चला तू प्यार समझकर, हटता चला विषय रस्ते से।

प्यार तुझे था, अपने तन से, अपने धन से, लघु जीवन से।
पूज रहा था तू कंकड़ को, आँख लड़ी थी कब कंचन से।
प्यार किया था कब जीवन से, भाग रहा था प्रिय दर्शन से।
अर्थ-सिद्धि में निशि-दिन अविरत, लगा हुआ था बड़ी लगन से।

प्रेम जगत से माँग रहा था, यह प्रेमी की शान नहीं है ।
दान करे औ' कीमत चाहे, दानी, यह तो दान नहीं है ।
मूल्य नीर का सरि कब लेती; रवि कब लेता मोल किरण का ।
तरुवर कब छाया की कीमत, मूल्य कहाँ है अनल पवन का ।

प्रेम महा बलिदान बटोही, लेन-देन व्यापार नहीं है ।
सागर, सरिता का संगम है, जीवन है, बाजार नहीं है ।
जलकण का सागर होना है, रजकण का अंबर होना है ।
कण-कण को है विस्तृत होना, नर को बढ़ ईश्वर होना है ।

प्रेम सृष्टि का एक नियम है, ईश यही है, यह जीवन है ।
इसपर ही है विश्व नियंत्रण औ' संचालन, यही सृजन है ।
सागर एक, अनेक लहर पर, एक लहर भी नहीं पुरानी ।
लहरों ने सागर की हस्ती में अपनी हस्ती पहचानी ।

जीवन एक, अनेक रूप में, नित अमर निरंतर लहराता ।
जीवन-सरि में रूप लहर सा, उठता मिटता बनता जाता ।
लहरों में नित सागर निश्चल, निश्चल परिवर्त्तन में जीवन ।
प्रेम सुनहरे जीवन-सूत्रों से बाँध रहा है परिवर्त्तन ।

रोने का अवकाश कहाँ था, तेरा प्रेम विनाश कहाँ था ?
चलता था क्यों प्यासा राही, जीवन का कटुहास कहाँ था ?
भोला राही, भूला राही, ओ राही, ओ प्यासा राही ।
दूर चला रस्ते से कितना, पथ कितना था सीधा राही ।

(६)

बना न जीवन, प्रेम न सीखा, क्या मानव, क्या ईश्वर होना ।
स्वार्थ वही, तब प्यास वही है, राही मंजिल-मंजिल होना ।
झूम रहा हो निज प्रभुता में, जीवन से संपर्क नहीं हो ।
क्या बढ़कर ईश्वर बनना, जब प्रेम पथिक आदर्श नहीं हो ।

प्रेम नहीं तो ईश्वर कैसा, कैसा संहार, सृजन कैसा ?
विश्व-रचैता विश्वंभर क्या, क्या जीना, और मरण कैसा ?
क्या सत्,क्या चित्,क्या ईश्वर-पद राही, परमानन्द नहीं जब ?
क्या बल, क्या विक्रम के मानी, राही, तू स्वच्छंद नहीं जब ?

अपनी विषय-वासना लेकर, खोज रहा राही ईश्वर को ।
गंदले कीचड़ में गड्ढे के ढूँढ़ रहा है मानसरोवर को ।
राही यदि जीवन बन जाता, ईश्वर से बढ़कर बन जाता ।
ईश्वर जड़ चेतन है, जीवन प्रेम-लहर बन-बन लहराता ।

राही, जीवन ही ईश्वर है, किस ईश्वर को खोज रहा तू ।
पी ले जीभर इस सरिता में, क्यों प्यासा-प्यासा फिरता तू ।
जीवन एक, एक है विश्व में, अलग-अलग क्या रहना राही ।
सरि से अलग लहर का होना, है उत्पीड़न और तबाही ।

अपने कर में विश्व बसा ले, उर में अपने अलख जगाले ।
तू ही तो सागर है राही, पी ले, अपनी प्यास बुझाले ।
प्रियतम, तेरा दूर नहीं है, तू ही अपना प्रियतम राही ।
तू ही राही, पथ तू ही है, तू ही तो है जीवन राही ।

भोला राही, भूला राही, ओ राही ओ प्यासा राही ।
दूर चला रस्ते से कितना, पथ कितना था सीधा राही ।

मृत्यु-बाला

जीवन की सहचरी मृत्यु,
तू किस अलका की परी मृत्यु !
अन्याय हुए कितने तुझपर,
तू जीवन से भी बड़ी मृत्यु !

कितनी अनीति झूठे कितने, तुझपर बाले दोषारोपण ।
जीवन कष्ट रहा फिर भी, क्यों तूने वार दिया निज तन मन ।
क्या जल-थल गिरिवन ने समझा, क्या कुछ नील गगन ने समझा ।
कुछ समझा तो मैंने बाले, नहीं तुझे जीवन ने समझा ।

प्यार किया पर नजर बचाकर, चूम लिया पर अधर छिपाकर ।
रोया तू आँसू पी पीकर, याद किया पर दिल के भीतर ।
प्रेम किया छिप छिपकर तूने, देख लिया छिप छिपकर तूने ।
और बलायें जीवन की ली, जहर पिया छिप छिप कर तूने ।

जीवन की अजेय पुजारिन, अद्भुत तेरा प्रेम पुजारिन ।
अद्भुत तेरी पूजा अर्चन, अद्भुत तेरा प्रेम पुजारिन ।
जीवन जग में चला अकड़ता, तू चली सहमती सकुचाती ।
वह तेरा आभास न पाता, तू उससे निज प्रेम छिपाती ।

जीवन ले आनन्द चला, जग में तू लेकर अवसाद चली ।
वह चला लुटाता यौवन, मस्ती, तू ले विषम विषाद चली ।
वह आगे, तू पीछे-पीछे, चली काँपती परछाँही सी ।
होठों पर अपनी अँगुली दे, चुपके-चुपके पाँव उठाती ।

जीवन की अदृष्ट सहचरी, बाले ! कितनी तू भेद भरी !
प्रेम अलौकिक कितना तेरा, लौ सेवा की कितनी गहरी !
हँस खेल लिया दो चार घड़ी, जब छोड़ चला जीवन तन को ।
तूने अपने सर अपयश ले, तब निर्दोष किया जीवन को ।

हँसता आया चला गैर-सा, जीवन की यह निष्ठुरता थी ।
तू आई तब रोती-रोती, उर में कितनी भरी दया थी ।
पर, निज को निष्ठुर बतलाया, जीवन को अति मधुर बताया ।
लांछना लिये अपने सर पर, जीवन का यश तूने गाया ।

पूज रही जीवन को चुपके, क्या हुआ न जीवन जान सकी ।
तेरा व्रत तो सेवा करना, क्या हुआ न जग पहचान सका ।
छोड़ चला जब जीवन तन को, तूने उसको अंक लगाया ।
अपनी शीतल गोद बिठाकर, मौन अश्रु तूने ढलकाया ।

चूम लिया उन मौन अधर को, जिनको जीवन ने चूमा था ।
लिपट गई तू उससे जिस पर आह ! कभी जीवन झूमा था ।
हेर लिया उन आँखों को, जिनमें अब कोई संवाद नहीं ।
लगा लिया छाती से वह तन, जिसमें जीवन आबाद नहीं ।

बर्बाद न हो इक अणु भी, ऐसी तेरी ही अभिलाषा ।
आबाद पुनः जीवन से हो, कितनी तेरी सुन्दर आशा ।
पृथक किया अणु-अणु को इसके, प्रेम यत्न से, प्यार परस से ।
अंचल ले अणु-अणु को, कुछ तू सोच रही है नयन सरस से ।

कंपित कर से कुछ अणु को तू सौंप रही जल को, कुछ थल को ।
कुछ अणु को फिर नील गगन को, सौंप रही कुछ अनिल अनल को ।
बोल रही यों अनिल अनल से, जल से, थल से, नील गगन से :
"देव ! धरोहर जीवन के ये, बिछुड़ गये किंचित जीवन से ।

देव ! इन्हें प्रिय रखना तुम भी, इन्हें पुनः जीवन को देना ।
छोड़ न दे इनको निष्ठुर वह, यही वचन उससे ले लेना ।
देव ! याद इतना रखना तुम, मेरा भेद नहीं खुल पाये ।
जान न जाये जीवन मुझको, मेरी लाज नहीं लुट जाये ।"

"था, वह देना दानवी एक–बड़ी क्रूर और बड़ी भयंकर ।
लिये चली थी इन अणु को, वह अपना खूनी खप्पर भरकर ।
उड़ते थे अंगारे पग से, जग चहुं दिशि जलता जाता था ।
जिस डगर चली जाती थी, खंडहर सुनसान नजर आता था ।"

"बाल नहीं थे, अगणित नागिन सर पर चढ़ फुफकार रही थीं ।
रोम रोम से रोग-व्याधियां, तुझको ही ललकार रही थीं ।
रूप, राशि, यौवन का मेरे, जीवन को आभास न होवे ।
मैं जानूं निज प्रणय कहानी, प्रियतम से परिहास न होवे ।"

"रहने देना अंतरिक्ष में, धूमिल पथ पर चलने देना।
मुझे किरण से काम नहीं, कुछ अन्तर ज्वाला जलने देना।"
सुन्दर, तेरी सुन्दरता से, बाले ! तू जीवन का जीवन।
तेरे त्याग, तपोबल तेरे, जाते जीवन की निधियाँ बन।

किसकी अंतिम घड़ियाँ तूने, गिनी नहीं किसकी उर-धड़कन।
तजकर चली किसे जीवन सी, काट न डाले किसके बंधन।
दर्द कौन जिसकी न दवा तू, वह प्रश्न कौन जो हल न हुआ।
कौन अनाथ रहा किसका, कब आश्रय तेरा अंचल न हुआ।

कब न धरा बन फटी जानकी-हित, सफल परीक्षा तू न बनी।
किस मजनू की बनी न लैला, किस लैला का मजनू न बनी।
कौन शहीद हुआ जगती पर, कीर्ति अमर किसकी हो पाई।
विजय पताका किसकी फहरी, जिसने तुझसे लौ न लगाई।

जीवन की सहचरी मृत्यु,
तू किस अलका की परी मृत्यु !
अन्याय हुए कितने तुझपर,
तू जीवन से भी बड़ी मृत्यु !

नीरद-बाला

जल-थल की दिवानी बेटी, चढ़ी जवानी में अकुलाती,
नभ की सुप्त चेतना चली जगाने, अलसाती इठलाती।
पांवों में तूफान, पैंजनी, बिजली की लड़ियां नैनों में,
उड़ती चली पवन पर नीरद-बाला पिया मिलन उर ठाने।

नभ के ऊपर चली संवरकर, अपने पिय को भेंट चढ़ाने,
अपनी मस्ती, अपना यौवन, अपना प्रेम-आसव छलकाने।
पिय के तृषित अधर सरसाने, तृषित हृदय का ताप मिटाने,
प्यास बुझाने तृषित नयन की, अपने पिय पर बलि बलि जाने।

मदमाती झूम चली नभ पर, पिय से गले-गले लग जाने,
छलकाती पिय की रीती नगरी में प्रेम भरे पैमाने।
छोड़ चली घर, प्रियतम-नगरी, जल को थल को झकझोर चली,
खिचती खिचती नभ पर पगली, हिलती डुलती पिय ओर चली।

पिय किरणों की रेशम डोरी, और समीरण के हिण्डोले,
उठती बेसुध चली संवरिया, काले-काले कुंतल खोले।
उड़ती चली, चकित गगनांगन, प्रियतम का दूर निवास अरी,
पूछ रही तारों से हिलमिल, कौन डगर जाती उस नगरी।

'आह' कहा तारों ने "बाले यह तुझको कैसे बतलायें ?
युग युग बीते, पता न पाया जिस पथ का, कैसे दिखलायें" ?
बिलख बिलख तब शशि से बोली, खोला हृदय, दिखाया अंतर।
प्यारे मेरे ! अब बतलादो कौन डगर जाती पिय के घर।

चकित हुआ शशि फिर यों बोला, 'संगिनी क्या तुझको बतलाऊँ ?
बीत गये मनवंतर कितने, पर जिसको मैं ढूंढ न पाऊँ'।
निशि से पूछा और दिवा से, फिर उदभ्रांत दिशाओं से भी।
पूछ पड़ी उषा से पगली, राह बता सखि पिय के घर की।

'पिय के घर की पिय के घर की' प्राची में प्रतिध्वनी गूंज उठी।
उषा के कंपित अधरों पर 'पिय के घर की पिय के घर की'।
'कैसे अरी सखि बतलाऊँ', जिस पथ को पहचान न पाती।
रोज रोज स्वर्णिम रथ जाता, किस मग से मैं जान न पाती।

'युग-युग से प्राची में अपनी साध बिखेर दिया करती हूँ,
जाऊँ कभी पिया के घर भी, इतनी आस जिया करती हूँ'।
सुनती चली, अतुल अकुलाती, अवनी की बिटिया अभिमानी।
बोल उठी झूठी है, झूठी, झूठी नभ की प्रणय कहानी।

छोटे दिल के नभवाले हैं, छोटी इनकी प्रणय कहानी।
मैंने पिया मिलन की ठानी, रुक जाये वह नहीं जवानी।
थम जाए वह नहीं रवानी, मचल गई मानिनी दिवानी।
जाऊँगी पिय के घर निश्चय चाहे डगर भले अनजानी।

लपक झपक मग चली खोजने, उमड़ घुमड़ नभ पर पिय घर का।
कहीं चला कुंतल फहराता, अंचल कहीं अलग था सर का।
ढूंढ रही थी कोने-कोने, माप रही विस्तार गगन का।
पिय के घर की राह न पाती, हाय न भाग्य सितारा चमका।

पिय के रथ को आते देखा, पिय के रथ को जाते देखा।
ऐसे पंख कहाँ उड़ पाती, केवल जाते आते देखा।
नयन रुके पलभर न छली के, पलभर न सवारी हुई खड़ी।
आघात पड़े इतने कस के, झंकार उठी हिय की तंत्री।

टंकार उठा, दिल टूट गया, तम आँखों में बिजली बिखरी।
असहाय फिरी अपने मैके, रूकती न तनिक थी नयन झरी।
नभ की बस्ती सुनी सानी, मिलती तेरी नहीं निशानी।
यह तेरा बलिदान अनोखा, लघु बूंदों में ढ़ली जवानी।

बलि, लेकिन निष्फल हो जाय, प्रेम-प्रयास विफल हो जाए।
संभव नहीं, नहीं यह संभव, ध्रुव चाहे चंचल हो जाए।
संभव नभ गिर जाए, संभव भू का मेरूदण्ड बलखाए
संभव नहीं, बसे पिय नयनों, और न खिंच बाँहों में आए।

बलि तेरा बिटिया बलिहारी, पिय की उतरी आज सवारी।
चूम रहा पिय बूँद-बूँद को, एक बार औ' बारी-बारी।
अगणित बूँदों में तू बिखरी, सागर में, सरि में, झरनों में।
सोपान लगे नभ से भू पर, पिय उतरा अगणित किरणों में।

री चल किरणों की डोरी पर, चल चंचल स्वर्ण खटोली पर।
शुभ घड़ियाँ हैं सुखद महूरत, आज पिया उतरा अवनी पर।
पिय तेरा कण-कण में तेरे, घुल-मिलकर मुस्काता बाले।
आज मानिनी मान न कर तू, मधुर-मधुर मुस्का, सुख पाले।

अमर सुहाग रहेगा तेरा, अमर बिमल बलिदान रहेगा।
धूप-छाँह में विरह-मिलन की, जग जीवन अम्लान रहेगा।

आंधी

(१)

आज, पंछी ! मांगता तू एक तिनका !
आज अग से, आज जग से,
तरूलता से, आज मग से,
नयन भर नभ से, धरा से,
चाहता है इक भिखारी एक तिनका !
आज, पंछी ! मांगता तू एक तिनका !

(२)

चाहता है, कब खजाना तू किसी का !
छीनता, कब आबदाना तू किसी का !
कब पराये भाग्य पर पंछी जला तू !
चाहता कब, दिल दुखाना तू किसी का !
बिजलियों से कब कहाँ मुंह मोड़ता तू !
नीड़ का निर्माण करना छोड़ता तू !
कब थपेड़ों से हवा के आह डरता !
कब विटप से राग नाता तोड़ता तू !
चाहता तू एक तिनके के सहारे,
घर बसालें, मूक सपने को सजाले !
रोक ले, तूफान, बादल और बिजली,
एक दुर्बल दीन तिनके के इशारे !
आंख से तेरी न आंसू एक ढलका !
आज, पंछी ! मांगता तू एक तिनका !

(३)

आज, प्रेमी ! इक नजर भर चाहता तू !
इक नजर बस और क्या है मांगता तू !
देख ले तू आज उनको, वह तुझे भी !
देख ले बस आज इतना जानता तू !
रूप किसका, मांगता अधिकार किस पर !
ले रहा क्या, दे रहा निज भार किस पर !

सोचता, किसपर निछावर जानकर दे,
औ' लुटा दे आज ही संसार किस पर !
आज रोने की इजाजत मांगता तू !
आज मिटने की मुसर्रत मांगता तू !
आज हंस-हंस के शहादत मांगता तू !
कौन कहता है मुहब्बत मांगता तू !
एक हंसी में, प्रेम को संसार देखे !
बूंद में उमड़ा जलधि-विस्तार देखे !
प्रेम की बस इक नजर में काल कारागार,
का उठता हुआ व्यापार देखे !
आज, प्रेमी ! मांगता सुख एक क्षण का !
आज, पंछी ! मांगता तू एक तिनका !

(४)

आज बादल में भरे हैं रक्त के कण,
औ' पवन में गोलियों का नाद सन-सन !
आज रणचंडी लिये खप्पर खड़ी है :
"क्या यही बलिदान तेरा, ओ पुजारिन !
एक भी सागर न शोणित से भरा है !
रंग नदियों का अभी तक भी हरा है !
वेदियां नर मुंड की तूने बनाई,
देख, इनसे तो हिमालय भी बड़ा है !
ओ, धरा क्या बस यही बलिदान तेरा !
क्या रण स्थल वीर से सुनसान तेरा !
देखती प्यासी मुझे, संतान तेरी,
और हँसती क्या यही ईमान तेरा !"
आज, देवी ! मांगती बलि शक्ति व्रज का !
आज, पंछी मांगता तू एक तिनका !

(५)

दानवी संसार के सम्मुख मुकाबिल,
आज यतिवर तू खड़ा निर्भीक निश्छल !
शान्ति गिरिवन का लिये तू आज भी तो,
मनुज दानव को सिखाता सत्य का बल !
आज परिचय फिर अहिंसा से कराता,
आज गौतम का पुराना गीत गाता !
आज ईसा का लिये उपदेश गांधी,
फिर कन्हैया की वही मुरली बजाता !
नाचता जग-काल-भैरव, आज मुनिवर,
और तेरी तान धीमी क्षीण कातर !
क्या नहीं संभव कि मुरली का मधुरलय,
तव चरण में खींच ले संसार बर्बर !
आज, गांधी ! मांगता बस प्रेम भिक्षा !
आज, पंछी ! मांगत तू एक तिनका !

बापू की राख

जरा सी राख बापू की,
न दूँ किसको, किसे दे दूँ !
मुट्ठी-भर राख बापू की,
न दूँ किसको, किसे दे दूँ !

धरा को दूँ, गगन को दूँ, अरी गंगा ! तुम्हें दे दूँ !
नहीं यमुना, तुम्हें क्यों दूँ; न दूँ किसको किसे दे दूँ !!
समन्दर माँगता मुझसे, सुरासर हाथ है बाँधे !
दिशायें याचना करतीं, खड़ा है चान्द दम साधे !!
सितारे ताकते मुँह को, अड़ा है सूर्य भी रथ में !
हजारों माँगने वाले, घिरा चलता हूँ मैं पथ में !!
जरा सी राख बापू की,
न दूँ किसको, किसे दे दूँ ?

अकड़ कर माँगता जाता, विगत गौरव जमाने का !
भविष्यत भी गरज उठता, मुझे अधिकार पाने का !!
सिसकती आज भारत माँ, मुझे दे दो विभव मेरा !
विभव संसार का यह तो मचल पड़ती है मानवता !!
चले हैं हाथ फैलाये, नबी भी, बुद्ध, ईसा भी !
उधर लो माँगने मुझसे सवारी हंस की आती !!
जरा सी राख बापू की,
न दूँ किसको, किसे दे दूँ ?

अरे ! यह राख है, जिसमें सनातन नेम छिपता है !
अरे यह राख है, जिसमें अपरिमित प्रेम छिपता है !!
शहीदों का लहू छिपता, दलित की आह सोती है !
मनुज की रोशनी सोती, खुदा की राह सोती है !!
यही अभिमान मानव का, अरे उत्थान सोता है !
अहिंसा, त्याग, सोते हैं, मनुज का मान सोता है !!
जरा सी राख बापू की,
न दूँ किसको, किसे दे दूँ ?

सिमट कर आ छिपा इसमें, समाज कल्याण सुर नर का !
अरे ! यह राख है जिससे सजेगा भाल शंकर का !!
अभी इस राख का कण-कण नया आदर्श बन-बनकर !
सजावेगा नई दुनिया, नया आकर्ष बन-बनकर !!
नई गीता, नया कुरआं, नया युग-धर्म मानव का !
दया औ' प्रेम की दुनिया, बसा देगा नई अलका !!

जरा सी राख बापू की,
न दूं किसको, किसे दे दूं ?

बसंत से

(१)

यौवन मद का मस्त बवंडर ! कहाँ चला आता दीवाने ।
मानव की निर्मम नगरी में, तू बिन जाने, बिन पहचाने ।
उन्मत्त भ्रान्त खोया-खोया, अटपट ठाट-बाट मस्ताने ।
मानव के तू शिष्ठ नगर क्यों आया पहन बसंती बाने ?
किसलय पल्लव सुमन लता से, जग को नव परिधान पिन्हाने ।
पथ भूला ! कहाँ चला आता, अंधे शर अनंग संधाने ।
विकल विपुल विह्वल उद्गारे, मधु मदिरा के भर पैमाने
मानव के विज्ञान सदन में, उथल-पुथल विप्लव सरसाने ।
बागी ! कहाँ चला आता है, मानव की बल विकसित निर्मम
नगरी में तेरी खोज नहीं, पहिचान न पाते तुझको हम ।

(२)

यहाँ मनुज हैं, सभ्य-सुशिक्षित, गिरि, अंचल, वन, उद्यान नहीं ।
कोकिल चुप हैं, मूक पपी हैं, भ्रमरों का गुन-गुन गान नहीं ।
यहाँ नहीं कलियों की टोली, भोली-भाली मधुबालायें ।
यहाँ न होती आँख मिचौनी, यहाँ नहीं अलसाती बाहें ।
जा पगले ऋतुराज ! वहाँ जा, हो जहाँ थिरकती मधुबाला ।
पत्तों में मस्ती झूम रही हो, नाच रही हो मधुशाला ।
चंदन चर्चित पवन बुलाता, जहाँ कली हो आँख बिछाती ।
तेरी अगुआनी में, कोयल स्वर लहरी हो जहाँ सुनाती ।
सिमट-सिमट कर सुन्दरता हो, डाल-डाल पर लदती जाती ।
चूम-चूम कलियों के मृदु मुख, पुरवैया मद से हो इठलाती ।
जहाँ लताएँ सिहर-सिहर कर, पुलकित उर से आन मिलाती ।
जहाँ विहंगों की टोली नित गाती आती, गाती जाती ।

(३)

वह स्वर्ण-स्वप्न, विस्मृत सुषमा, ऋतुराज ! कहाँ वह युग अतीत?
यहाँ हृदय लोहे के बनते, लोहे की नस में लौह गीत ।
बह रहीं यहाँ शोणित धारें, फूलों को सरिता क्या लाना ?
हम रक्त माँस के भूखे हैं, मधुकलश पिलाने क्या आना ?

विहगों को तेरे क्या देखें, यहाँ विहग लोहे के बनते ।
खग-वृन्दों की क्या चहचह, जब नित तोपों का गर्जन सुनते ।

रक्त रुधिर के लाल रंग पर, तेरा रंग नहीं चढ़ने का ।
यह आँख कली को क्या देखे, जिसने अंतड़ी पंजर देखा ।

यहाँ बड़े गिरजाघर बनते, अगणित मंदिर-मस्जिद विशाल ।
पण्डित, पोपें, मुल्लायें नित बुनते रहते अति विकट जाल ।

कदम-कदम पर क्यामत उठता, पग-पग खुलता नर्क द्वार ।
पाप पुण्य यम-नियम सहस्रों, मानव चलता नित खड्ग धार ।

(४)

यहाँ चहकना पाप बताती नियमावलियों की धारायें ।
गुलशन में माली बोल रहा नित, यहाँ नहीं बुलबुल गायें ।

यहाँ कली के मुँह में ताले, निष्ठुर-कर माली भर देते ।
यहाँ मधुप को बेड़ी देते, कोयल को बंदी कर लेते ।

उद्गार यहाँ कैदी रहते, साँचों में भावें ढलते हैं ।
हैं मानव विवश मशीन बने, जो लीक पड़ी है, चलते हैं ।

कल-पुर्जे के पुतले मानव, कुछ इतने तेज बढ़े जाते ।
कुछ सोच नहीं सकते, कुछ ज्ञात नहीं, अवकाश नहीं पाते ।

जा जा जा ऋतुराज ! यहाँ से गिरि जंगल की झुरमुट झाड़ी ।
ले अपने सपने की दुनियाँ, ले अपने सपने की क्यारी ।

दूर शिशिर-पंजे से, पगले ! मानवता परिहास यहाँ है ।
बल विद्युत की पोली डींगें, मानव-खग दम तोड़ रहा है ।

(५)

ऋतुराज ! तुझे सुन्दर, हा सुन्दर कहता, तुझ पर बलि जाता ।
तू फेंक बसंती बाना, यदि क्रान्ति विपुल विप्लव बन आता ।

अरे, अनल बनता तू, मानव की जड़ता देता फूँक आज ।
फूँक–फूँक यह जीर्ण पुंज, जग कहता जिसको मानव समाज ।

बनता पतझड़ के झोंके, मानव–तरु से बन्धन टूट–टूट ।
सूखे पत्तों सा नष्ट–भ्रष्ट, धरती पर गिरते टूक–टूक ।

बेड़ी, जंजीरें, बंदीगृह दीवार धड़ाधड़ तल चूमे।
हों चूर, मुक्त बंदी जीवन से, आज निकल आता बंदी।

मानव फिर स्वच्छंद हो जाता, करता अपनी पहिचान आप।
पाकर निज खोई मानवता, नवयुग का निर्माण आप।

उस नवयुग के उज्जवल प्रभात में, स्वागत तेरी हम करते।
तू आता ऋतुराज! गले लगाते, खोल–खोल कर दिल मिलते।

सावन

मैं आग माँगता हूं।
मैं आग माँगता हूं॥

सावन, घटा तुम्हारी, वर्षा रही है पानी।
मुझको तृषा अनल की, मैं आग माँगता हूं॥
यह नील-नील अंबर, काले अशिष्ट बादल।
भाते नहीं हृदय को, अंगार माँगता हूं॥
नहीं नर्म-नर्म बूंदें, नहीं रंगहीन विद्युत।
बढ़ता तरल अनल का, मैं ज्वार माँगता हूं॥
ऊपर गगन अनल का, औ' लाल-लाल बादल।
बस होलिका दहन हो, मैं फाग माँगता हूं॥

मैं आग माँगता हूं।
मैं आग माँगता हूं॥

सावन व्यथा हृदय की, तुम क्या समझ सकोगे?
जलते हुए हृदय से, तुम क्या उलझ सकोगे?
नाजुक बहुत हृदय है, नगरी ये प्रेमियों की।
सजती चिता यहाँ पर, निशि-दिन विरह-जलों की॥
पग-पग समाधियाँ हैं, खिलती हुई कली की।
हर साँस में घुली है, आशा जली किसी की॥
कण-कण में इस जमीं के, सपने सने हुए हैं।
वातावरण यहाँ के, दुख के बने हुए हैं॥
इक आह छिप रही है, नित ओठ में हँसी की।
आँसू प' तुल रही है, नित साँस बेबसी की॥
अंचल सुहागिनों के, टंकती कफन-किनारी।
जलता सुहाग होता, रोना है पाप भारी॥
बनते यहाँ हलाहल, अमृत भरे कटोरे।
पी ले, विहँस छिपाले, भीतर दुखद हिलोरें॥
संसार जल रहा है, अरमान सो रहे हैं।
मुरझा रही हैं कलियाँ, उन्मान सो रहे हैं॥

मैं आग मांगता हूं।
मैं आग मांगता हूं॥

सपने न चौंक जायें, सावन संभल के आना।
सोये बहुत जतन से, देखो न गुल मचाना॥
बिजली! अरे न चमकें, चमकें भी तो अदब से।
झड़ियाँ इधर न झमकें; बरसें भी, तो अदब से॥
बस्ती में दिल जलों की, लगते नहीं हिंडोले।
ताने नहीं उड़ाते, रोना अरे हो गोले॥
जलना जिन्हें सुहाता, पानी को कब तरसते।
वर्षा जो चाहता मैं, आंसू मेरे बरसते॥
जलकर कुछ और थोड़ा, विस्तार मांगता हूं।
मरकर कुछ और भी तो, आजार मांगता हूं॥
सावन घटा तुम्हारी नहीं प्यार मांगता हूं।
मैं आग मांगता हूं, अंगार मांगता हूं॥
ऊपर गगन अनल सा, औ' लाल लाल बादल।
बस होलिका दहन हो, मैं फाग मांगता हूं॥

मैं आग मांगता हूं।
मैं आग मांगता हूं॥

आज़ादी

(१)

तुझे जब कल्पनाओं ने क्षितिज पर दूर देखा था !
उठी जय-जय की ध्वनी सहसा, विवश, मजबूर देखा था !!
जहाँ तेरे चरण देखे, वहीं आकाश को झुकता !
जिधर तेरी नजर देखी, बरसता नूर देखा था !!

सुगम पर्वत-शिखर हमको, विपथ अनुकूल लगते थे !
डगर में शूल थे जितने, मुलायम फूल लगते थे !!
हंसी आती थी झंझा पर, दया सागर के गर्जन पर !
उतरता स्वर्ग था, सपने सजीव, स्थूल लगते थे !!

हवायें तेरे अंचल की, नियंत्रण छोड़ चलती थीं !
जंजीरें तोड़कर चलतीं, दिशायें मोड़ चलती थीं !!
उगाती नवल आशायें, नई रंगीन दुनिया की !
सबल शोषण के मूलों को, सहज झकझोर चलती थीं !!

विषमता, दीनता, दारूण प्रकंपित दासता तुझसे !
कटी जाती हकुमत की, पुरानी शृंखला तुझसे !!
शहीदों के लबों पर थे, नए अन्दाज के गाने !
नये थे वलवले[1] दिल में, नया था होसला तुझसे !!

हथेली पर लिये सर को, हमारी टोलियाँ निकलीं !
सरों पर बिजलियाँ टूटीं, बगल से गोलियाँ निकलीं !!
इन्हें कौतुक समझते थे जो तुझ पर जान देते थे !
मुसीबत, मौत, बाधायें, सभी हमजोलियाँ निकलीं !!

तेरे मुस्कान को, हमने अभय संचार समझा था !
अदा को, तेरी मस्ती को, सुखद संसार समझा था !!
उठा था सर, सदी बीते, हमारे देश का उस दिन !
कि तुझको प्रेम सरि समझा, दया साकार समझा था !!

---

[1] उमंग

विजय-धन-दायिनी सहसा, तुझे संजीवनी समझा !
कि कल्याणी, महादेवी, तिमिर-घन-नाशिनी समझा !!
अजब आँखों को धोखा था, अजब उन्माद था सर में !
अरी, मायाविनी ! तुझको व्यथा दुख-हारिणी समझा !!

(२)

मगर पाकर तुझे देखा तो किस्सा और ही कुछ था ।
वे दुनिया और ही कुछ थी, वे जलसा और ही कुछ था !!
सरों पर आस्माँ टूटा, जमीं पाँवों तले सरकी !
कि जन्नत का जो नक्शा था, तमाशा और ही कुछ था !!

सती औ' साध्वी जाना जिसे, कालिख भरी निकली !
जिसे अलकापुरी समझा, वह काली कोठरी निकली !
चमन की आह रंगीनी; कहाँ सपने सुहाने थे !
गगन-विस्तार के बदले, गली इक साँकरी निकली !!

कसी जंजीर में तू थी, हमीं ने मुक्त कर डाला !
तुझे सिंदूर फिर बख्शा, किया था तूने मुँह काला !!
निखारी तेरी सूरत को, हमीं ने खून दे देकर !
दिया अमृत-कलश तुझको, व' निज कंठों में विष डाला !!

भुला डालीं, अरी निष्ठुर ! अमर कुर्बानियाँ तूने !
शहीदों की अकथ, अनुपम, हजारों कीर्तियाँ तूने !
तुझी पर हौसले ठहरे, बंधी आशा तुझी से थी !
पलट डालीं मगर ! सारी-की-सारी पटरियाँ तूने !

अरी ! बाजार में बिकती, भरे दरबार में देखा !
बढ़ाती महल की शोभा, तुझे सरकार में देखा !!
बरहना नाचती फिरती, तुझे देहली की सड़कों पर,
कभी होटल के कमरों में, कभी गुलजार में देखा !!

विभव के पाश में जकड़ी, भला ईमान क्या जाने !
नये अन्दाज की महफिल, नये हैं आज पैमाने !
अदा की, हुस्न की तेरे, बराबर डाक होती है
खरीदारों का मजमा है, कहाँ अब तेरे दिवाने !

(३)

हम उसके चाहनेवाले, हम उस साकी के दिवाने !
हमारे दिल को जो छू ले, हमारा दर्द-गम जाने !!
कि जिसकी आम महफिल में, जो आये, जिन्दगी पाले !
भुला डालें खुदी सारी, चलें इस ढब से पैमाने !!

हम उसके चाहने वाले, हम उन आँखों के शैदाई !
घटा कल्याण की जिसमें, दया लेती हो अंगड़ाई !!
जहाँ वह बिजलियाँ पलती, विषमता फूंक दें पल में !
छिटक जायें किरण नूतन, बजे नवयुग की शहनाई !!

हम उसके चाहने वाले, विपुल आलोक के प्यासे !
बरस जाये जो घर-घर पर, लगाले होड़ चन्दा से !!
तिमिर दुख दैन्य का भागे, उठे बल दीप को लड़ियाँ !
मचल तूफान पर जायें, न बुझ पायें जो वर्षा से !!

हम उस लैला को दिल देते, जिसे पहचान हो दिल की !
हमारी कल्पनाओं की, हमारे साज सम्बल की !!
फिजा में खेत की खेले, जो झूमे बालियों से मिल !
हिला दे तार वीणा की, कली खिल जाय दिल-दिल की !!

जगा दे तार में कंपन, हमारी जिन्दगी बोले !
अभय, सुख, शान्ति का सरगम मधुर झंकार पर तोले !!
तनिक हंस दे चमन फूले, निगाहों के इशारों से !
लगे सुख-चैन के हिलने, हमारे घर में हिन्डोले !!

अन्वेषण

जब दूर गगन के अलख सदन में, बालक रवि शशि पलते थे।
था दिवस नहीं निशि अंचल में, तारे अभी नहीं जगते थे।

अभी नहीं जल तरल बना था, हवा सिसकना सीख रही थी।
नहीं दिशायें अबतक निर्मित, अग्नि अभी तक शीत जड़ी थी।

था रिक्त जलधि जलधारों से, भू शून्य मनुज परिवारों से।
पाषाण हृदय में चोट लगी, तेरे नयनों के वारों से।

ढूँढ रहा हूँ तब से तुझको, युग-युग उर में ले अमर प्यास।
नभ जीर्ण हुआ, मन्वंतर कितने बीते, फिर भी वही आस।

कण-कण में छिपता फिरता तू, कण में मैं भटका फिरता।
तू विविध रूप दर्शाता, मैं रूप-रूप में ढुलका फिरता।

तू हँसता नभ पर चाँद बना, मैं भू पर चकित चकोर बना।
वारिद बन जब तू मंडराया, मैं नाच-नाच कर मोर बना।

जब पुष्प बना मेरा प्रियतम, मैं मधुप बना, गुँजार किया।
तू शमा बना तो मैं पतंग, जल-जलकर तुझको प्यार किया।

तू सत्य बना, मैं रीति बना; तू सृष्टि बना, मैं नेम बना।
तू सुन्दरता, सागर समूह, मैं बहता अविरल प्रेम बना।

तू सूर्य बना, मैं बना दिवस, जब तू रजनी, मैं तारकदल।
तू नित हँसता, मैं रोता, हँसता तू, निश्चल मैं अति विह्वल।

तू साकी मैं पीनेवाला, तुझ पर मरने जीने वाला
तू मधु मदिरा की मादकता, जो झूम रहा वह मैं प्याला

तू उषा सुन्दरि, चिर सुन्दरि; मैं सूर किरण का दौड़-धूप
तू अनंत औ' विस्तृत विशाल; मैं सूर्य-चन्द्र तारक अनूप

तू जलधि बना औ' मैं तरंग; तू वारिद दल औ' मैं समीर
तू सुन्दरता, मैं कवि का उर; तू करूणा निधि, मैं अश्रु नीर

तू नद नदियों का रजत धार, औ' मैं हिमकण का द्रवित स्राव।
तू अस्ताचल की सांध्य मूर्त्ति, मैं शतरंगों का हावभाव।

तू पावस का मृदु चंद्रहास, मैं प्रेयसी का हिय हुलास।
तू नभ आँगन का ज्योति-पुंज, औ' मैं जुगनूँ निष्फल प्रयास।

तू सरिता का कल-कल निनाद, मैं छिन्न-भिन्न तारों का गीत।
तू दिव्य लक्ष्य, मैं चल प्रयत्न, तू भावी, मैं नित-नित अतीत।

रूप बदलता जाता है, मैं भेष बदलता जाता हूँ।
भूल-भूलैया रचता है, मैं पथ भूला, घबड़ाता हूँ।

ग कहता यह सृष्टि--नियम, मैं कहता यह केवल अन्वेषण।
ग कहता, इसको विरह--मिलन, मैं कहता, यह चिर आलिंगन।

मेंह क्यों बरसे !

न बरसो मेरे आँगन में, न चमको मेरे माथे पर ।
अकेली मैं हूँ सावन में, अकेला सेज सूना घर ।।
ऐ बादल दूर हो जावो, हटो बिजली मेरे सर से ।
भला जब दूर साजन हो, तो आखिर मेंह क्यों बरसे ।।

मेरी शंकायें बादल बन बरस आँखों से जाती है ।
मेरी आशायें पागल बन, मुझे पागल बनाती है ।।
बंधा है सिलसिला आँखों का मेरी जा समन्दर से ।
मैं खुद बादल हूँ सावन का, तो आखिर मेंह क्यों बरसे ।।

किसी ने सुध न ली दिल की, न पूछा मेरा गम क्या है ।
मेरी यह बेकली दिल की, ए बिजली तुम से कम क्या है ।।
चकम सकती है यह भी तो, मेरी आँखो के अन्दर से ।
मैं खुद हूँ रात सावन की, तो आखिर मेंह क्यों बरसे ।।

मैं अपनी स्याह जुल्फो में, घटायें घेर सकती हूँ ।
मैं अपनी शोख आँखों में, तो बिजली फेर सकती हूँ ।।
ए सावन तेरी रातों को, है अंधियारी मेरे घर से ।
मुझी से तुझको रौनक है, तो आखिर मेंह क्यों बरसे ।।

बना सकती हूँ मतवाली, मैं नदियां भी, समन्दर भी ।
उगा सकती हूँ हरयाली, समन भी गुल-सनोबर भी ।।
पिला सकती हूँ सहरा को, मैं प्याली दीदये तर से ।
मेरी मुट्ठी में सावन है, तो आखिर मेंह क्यों बरसे ।।

तुझे है सूझती रिमझिम औ' मैं लाचार बैठी हूँ ।
कहीं प्रियतम मेरा जालिम, कहीं बेजार बैठी हूँ ।।
नहीं भाते हिन्डोले है कि 'योगी' मेरा जी तरसे ।
भला जब दूर साजन हो, तो आखिर मेंह क्यों बरसे ।।

प्रेम-पंथ

ऐ दुनिया तुझको क्या मालूम, क्या दर्जा हमारा है।
हमारी है अलग दुनिया, हमारा पंथ न्यारा है।।

तू जिसको मौत कहती है, उसे हम जिन्दगी कहते।
तू जिससे है सहम जाती, उसे हम दिल्लगी कहते।।
जिसे मंजिल समझती तू, उसे कूचा-गली कहते।
तू जिसको चैन कह देती, उसे हम मौत ही कहते।।
जिसे कहती तू पागलपन, उसे हम रोशनी कहते।
जिसे मजनू कहा तूने, उसे दिल का धनी कहते।।
जिसे दरिया समझती तू, वह दरिया का किनारा है।
हमें पागल न कह दुनिया, हमारा पंथ न्यारा है।।

इन्हीं दो चांद-सूरज पर तू इतना नाज करती है।
इन्हीं दो पंख के डैनों से तू परवाज करती है।।
बनाए कितने घर हमने मुहब्बत में मिटा डाले।
उजाड़े कितने गुलशन औ' जलाये कितनी मधुशाले।।
बना डाली नई दुनिया, ए दुनिया, यह तू क्या जाने।
लहू से तुझको सींचा है, औ' तू हमको न पहचाने।।
तेरी सूरत को हमने ही तो मिट-मिटकर सँवारा है।
हमीं तो तेरा जीवन हैं, हमारा पंथ न्यारा है।।

बस, एक जलती कहानी है, दहकती गम-भरी अपनी।
बराबर आग की दरिया से गुजरी है तरी अपनी।।
अगर जिद पर हम आ जाएँ, जमीं-ओ-आसमाँ फूँकें।
वह बिजली पाल रखी है कि सारा गुलसिताँ फूँकें।।
हमीं ने थाम रखा है जमीं को और तारों को।
बना है विश्व तो लेकर हमारे ही विचारों को।।
किसी की शोख आँखों में छिपा नन्हा-सा तारा है।
हमारे पथ का जुगनू है, हमारा पंथ न्यारा है।।

गले बादल को बादल क्यों लगा लेते है, देखा है ?
जलन बिजली की पंजर में छिपा लेते हैं, देखा है ?
निरखकर चाँद की सूरत समन्दर क्यों उमड़ आता ?
यह किसका चाँद दीवाना, कभी घटता व बढ़ जाता ?
हवाएँ होठ कलियों के जो चुपके चूम जाती है,
उसी दम, फूल बन-बनकर ये कलियाँ मुस्कुराती है।
कभी इस भेद को तूने भी समझा है, बिचारा है ?
अरी तू मूढ़ है दुनिया, हमारा पंथ न्यारा है॥

किसी ने विश्व की दुलहिन का तारों से भरा आँचल।
किसी प्रेमी के हाथों ने सजे आकाश औ' जल-थल॥
गुलाबी चादरें ले ले बिछाती जा रही ऊषा।
क्षितिज पर आ रहा कोई, लजाती जा रही ऊषा॥
यही युग-युग के नाते हैं, सम्हाले ईश रचनाएँ।
यही मजबूर करते हैं कि दिल हम फेंकते जाएँ॥
किसी नादाँ के भोलेपन प' जिस्म-ओ-जान वारा है।
कि 'योगी' जग लुटा डाला, हमारा पंथ न्यारा है॥

कोयल

क्यों जले हुए अरमानों की मुट्ठी भर राख की अभी काली !
जो झुलस गया वह गात लिये, जो सूख गई वह हरियाली !
क्यों रूठ गई कोयल, क्यों लोचन तेरे नीर भरे गीले !
तस्वीर लिये कलियों की निशि दिन, निरख रहे ऊपर नभ नीले !

कुछ उपवन से खिची-खिची, कुछ मंजरियों से मिली जुली !
कुछ निष्ठुर कलियों से आसहीन, पर फिर भी कुछ-कुछ घुली-मिली !
क्यों मलय पवन की लहरों पर, तेरे मधुमय स्वर दर्दीले !
थिरक रहे तेरे क्रान्त करुण, उर कंपन की लय शैली ले !

तेरी मृदु स्वर लहरी में, फूलों की अविरल सरिता बहती !
तेरे उर की छाया में, कितनी फूलवती बनती रहती !
क्यों ऊँचे तरुवर पर एकाकी, फूलों की बेरहमी ले !
बैठी, फाड़ रही उर-अन्तर, नैराश्य भरी अलमस्ती ले !

प्रणय पीर औ' विरह अनल उर जला-भुना कोयल काली ले !
जादूगरनी, सजा रही, भूले सपनों के चित्र नशीले ;
तू रोती, गुलशन सज जाता, तू रोती, कलियाँ हँस पड़ती !
तू रोती, सबजे बिछ जाते, तू रोती, सिहर लता उठती !

तू रोती, बंधा हुआ आता ऋतुराज सुनहरे धागों में !
तेरी निर्मल स्वर लहरी के, तेरे मीठे अनुरागों में !
तू विरह व्यथा क्रंदन से भी वसुधा को सस्मित कर देती !
कैसा जादू बिरहिन कोयल ! तू करुण कूक में भर देती !

कुछ भेद बता प्रेमी जीवन का, त्याग तपस्या जप तप का !
प्रेमी आँसू से कैसे सहज बसा देते हँसती दुनियाँ !

मेरा कहना मान चलो

(१)

ऐ दुनिया के रहने वालो, मेरा कहना मान चलो।
हँस-हँस अधर प्रिया के बोले, "करलो मद रसपान चलो।"
आँखों का संकेत, "अरे देखो, न करो अपमान, चलो।"
बाहु गले में डाल किसी ने खींचा, "मेरी जान चलो।"
आज मिलन की मंगल बेला, पूरे सब अरमान चलो।
[illegible] कर बोला, "दो गज कफनी तान चलो।"
ऐ दुनिया के रहने वालो, मेरा कहना मान चलो।

(२)

साकी बोला नाज अदा से, "पीनेवालो जाम चलो।"
"यौवन रस से प्याले भर-भर, जीवन तुम तो मधुर कर[illegible]
ए दीवानों ! नाचो-गावो, हँसो-हँसो, लो मजे [illegible]
पियो पियो, जितना जी चाहे, काग उड़े नित नया-नया[illegible]
कब्र-सिकन्दर बोल उठी, "तुम मिथ्या दुनिया जान चलो।"
ऐ दुनिया के रहने वालो, मेरा कहना मान चलो।

(३)

चटकी कली चमन की बोली, "सौरभ मेरा है अनुपम।"
चहक उठी बुलबुल, "हाँ प्यारी, बहुत हुए पर तुझसे कम।"
मदमाती हलकी पुरवैया, चली चमन में सहम-सहम।
चम्पा, बेली, नवल चमेली, रूप अनूप अजेय परम।
झोंका एक खिजां का आया, "देखो सब सुनसान चलो।"
ऐ दुनिया के रहने वालो, मेरा कहना मान चलो।

(४)

निऊयार्क की अट्टालिकायें, मद से की गर्दन ऊँची।
चन्द्र प्रभा की चुन्दरी पहने, ताज नवेली झूम उठी।
वृद्ध कुतुब दिल्ली से से बोला, "तारों की है क्या दूरी।"
बेबिलोन का टावर विहंसा, "चाहूँ चाँद पकड़ लूँ री।"
गरज उठा भूकम्प, "अरे रे, क्यों करते अभिमान चलो।"
ऐ दुनिया के रहने वालो, मेरा कहना मान चलो।

(५)

ाग को निशा सँवर कर बोली, "मैं तो निश्चय अजर अमर।"
"निश्चय" मचल गई कविता भी, "नहीं कदापि, नहीं नश्वर,"
ूम-झूम कर शक्ति विश्व की बोल उठी, "मैं अभय निडर।"
अहंकार वसुधा का तमका, "मैं अनंत, मैं अविनश्वर।"
मत्व जगाता बोला यति, "तुम माया यह पहचान चलो।"
ऐ दुनिया के रहने वालो, मेरा कहना मान चलो।

(६)

कांप उठी दुनिया थर-थर, सुन ब्रिटिश सिंह की हुंकारें,
सुन मसोलिनी का सिंहनाद, सुन हिटलर की ललकारें।
वह देख चीन में विकट फाग, बहती वे शोणित धारें।
राष्ट्रों के साम्राज्य स्वप्न वे, ललच उठी सब तलवारें।
अट्टहास किया हिलेना ने "झूठी यह सब शान, चलो।"
ऐ दुनिया के रहने वालो, मेरा कहना मान चलो।

क्यों तुझे संसार चाहे ?

क्यों तुझे संसार चाहे !
इस जगत को क्या दिया है !
जब हुआ, कुछ ले लिया है !
स्वार्थ की सौदागरी-व्यापार में, क्यों प्यार चाहे !
क्यों तुझे संसार चाहे !

बूंद जिस घट से न छलका !
देख प्यासों को न ढलका !
काम प्यासों के न आया, क्यों जलधि विस्तार चाहे !
क्यों तुझे संसार चाहे !

एक मुट्ठी खाक अपना !
दे सका जग को न इतना !
घोर इतनी देह-ममता, क्यों प्रणय उपहार चाहे !
क्यों तुझे संसार चाहे !

तू न जग का भार ढोया !
विफल निज संसार ढोया !
आप में डूबी तरी, क्यों प्रेम का पतवार चाहे !
क्यों तुझे संसार चाहे !

हाँ, मुझे तुम जान लेना

बादलों से लड़ झगड़ कर, रश्मियां आलोट जाएँ।
जब लटों पर, औ' तुम्हारे होंठ से मिल मुस्कराएँ।
फिर उतर कर चरण चूमें, फिर उछल दुखगान कानों
में विकल स्वर से सुनाएँ, औ' करें कुछ याचनाएँ।

इस मधुर क्षण में विवशता,
मानिनी पहचान लेना।
तुम मेरे अन्तःकरण की,
हाँ, मुझे तुम जान लेना।

टूट तारक डोर सहसा, जब क्षितिज की ओर जाएँ,
औ' पवन में क्षीण दीपक की लहक, जब झिलमिलाएँ,
पुष्पकर से ढुलक जाएँ ओसकण-से मोतियाँ जब,
औ' तुम्हारी नींद से बोझिल पलक जब चौंक जाएँ,

इस कुलाहल में विकल उर
रागिनी पहिचान लेना।
तुम मेरे अन्तःकरण की,
हाँ, मुझे तुम जान लेना।

जब किसी अज्ञात नगरी से, प्रिये! आह्वान आए,
नयन मग से प्रेम उतरे और दिल को गुदगुदाये।
यामिनी के वक्ष पर तिरती हुई अरमान-नौका,
याद सपनों के मनोहर जब तुम्हें उपहार लाए।

मूक सपनों में पली उर
दामिनी पहिचान लेना।
तुम मेरे अन्तःकरण की,
हाँ, मुझे तुम जान लेना।

दृष्टि में उठते बवंडर, नाव जब भू चाल जाए।
इस अनन्त पथ पर अपरिचित पग तुम्हारा डगमगाए।
घोर अंचल का पकड़ तूफान से जो होड़ ले ले,
हाथ कटि में दे तुम्हारी, जो विजय मेरी बजाए।

इस अतुल निर्भीकता को,
संगिनी पहिचान लेना।
तुम मेरे अन्तःकरण की,
हाँ, मुझे तुम जान लेना।

सुघर लुटेरा

शान सूर्य की ले ली तू ने, शशि की सुन्दरता ले ली।
नैनों में नभ को ले तूने, सारी मोहकता ले ली।

घन बन आये जुल्फें तेरी, बिजली मांग संवार गई।
तट पर तेरे लोट गई नागिन, यमुना बलिहार गई।

दूज चन्द्र को छीन गगन से, भौं का रूप संवार लिया।
इन्द्र धनुष से रंग ले ले, आँखों का श्रृंगार किया।

और कपोलों पर मल ली कुछ लाल उषा की लाली से।
होंठ सजाये तूने सखि री, चुने गुलों की लाली से।

हंसो से ली तूने गर्दन, आँख गजालों की ले ली।
गुल की पंखुरियों से, चोरी कोमलता की तूने की।

सागर मथ अधरों को शायद, अमृत का भंडार किया।
ा तूने ला श्रोत सुरा का, होंठों में संचार किया।

कैसा था संकेत अरी उन भोली-भाली आँखों का।
कामलोकी परियाँ उतरीं, तरुण-तरुण कुछ साज-सजा।

ान में तेरे आन मचाया, कुछ जादू से उथल-पथल।
निखरे यौवन अकस्मात री, और बने लोचन चंचल।

लूट चमन के फूलों को सखि, तुझे सजाया परियों ने।
आँखों में टोना भरकर, बेमिस्ल बनाया परियों ने।

ाठ पढ़ा 'ना' का तुझको, हाव भाव का नाज अदा का।
डाल दिया तुझपर बेढ़ब पर्दा कैसा शर्म हया का।

पर पत्थर दे दिल के बदले, प्यार तुझे सौ बार किया।
तुझे बनाकर प्रेम मूर्ति री, क्यों इतना होशियार किया।

फिर कानों में धीरे-धीरे राज़ प्रेम का खोल दिया।
तू मुस्काई, परियाँ हँस दीं, हँसते-हँसते हुईं विदा।

उच्च हिमालय सम शिखरों पर, तूने अपना स्थान लिया
और किया प्रकृति चेरी ने, जो कुछ तूने ठान लिया

जिस तरफ उठी तेरी उंगली, आँख विश्व की वहीं गई।
जिस ओर गईं आँखें तेरी, एक खुदाई वहीं गई।

लूट लिये ये सुधर लूटेरे, जल-थल, नभ को, तारों को
मधुर हास से पलट दिये, युग-युग की बहती धारों को

बसंत–बालिका

आ शिशिर के गोद से बाले ! उमगती, कांपती ।
आ भरी उल्लास से तू, हिमकणों को पोंछती ।

पैंजनी झंकार तेरी, राग है खग वृन्द का ।
पांव की ध्वनि से अवनि पर, फाग है गूँजा हुआ ।

आ, शिशिर के गर्भ से, यौवन भरा प्याला लिये ।
मद कलश कटि से सँभाले, एक मधुशाला लिये ।

कुंजलता-सी, कामिनि-सी, आ, लिये कोमल मधी ।
केलि-सी, चपल लता-सी, आ लपकती माधुरी ।

आ बनी तू ज्वार गति से, विप्लवी अधिकार से ।
चार दिक् सुषमा लुटाती, रंग-रूपागार से ।

मंद जूही की सुरभि-सी, आ सखी लज्जावती ।
जगमगाती कुंद-सी तू, आ रि नर्गिस मद भरी ।

आ, पवन के दिव्य पंखों पर, अलौकिक बासिनी ।
आ, बनी तू पुष्प–सरिता, रंग का सागर बनी ।

आ, कमल-सी खिलखिलाती, ले गुलाबी री हँसी ।
आ, लिये मस्ती बसंती, नयन में अनुपम सखी ।

स्वर्ग भू पर आ बना, जय-जय सखी अविरल उठे ।
बल उठें ईर्षाग्नि ज्वालें, स्वर्ग भू से जल उठे ।

पर्वतों पर, कन्दरों में, और समतल भूमि पर ।
आ, तरंगित कर अनिल को, जलकणों में भर लहर ।

उन उमंगों की हिलोरें, यौवनोदधि ज्वार में ।
आ, मचाती शोर, अविरल प्रेम के बाजार में ।

आज कलियाँ हँस उठीं, तेरी हंसी पर खिलखिला ।
आज भूतल पर दिया तूने, नयी अलका बसा ।

क्या कहा तूने, अरी, प्रकृति–बधु पुलकित हुई।
फेंक अम्बर मुस्कुरा तव अंक में सुभित हुई।

फूल तेरे आज पद-रज, फूल कर हैं चूमते।
आज किसलय और पत्ते, हर्ष से हैं झूमते।

री, शिशिर की बालिका! सीखी कहाँ जादूगरी।
क्रान्ति की लहरें उठाती, तू चली चिर सुन्दरी।

फूल बन बन आज स्वागत में उठी कलियाँ सकल।
बेग से, अति तीव्र उर में, उठ रहीं लहरें प्रबल।

मैं और तुम

स्वर्ग बसा देता मैं भू पर, यदि तुम मिलते, मेरे होते।
हँस-हँस फूलों को ठुकराते, हम काँटों पर सोते-सोते।

इन्द्र-धनुष के सप्तरंग में, घुल-मिल जाते, निजको खोते।
फिर एक रंग बन, एक किरण, पृथक्-पृथक् हम कभी न होते।

दो नयनों के अश्रु कणों को एक लड़ी में सुघर पिरोते।
हँस-हँस फूलों को ठुकराते, हम काँटों पर सोते-सोते।

मिट न सके वे शंकायें हम, हट न सकें वे बाधायें हम।
नियति नटी की लीलायें हम, जग की जटिल समस्यायें हम।

एक हँसी की ध्वनि-प्रतिध्वनि के सागर में नित डाल डुबोते।
हँस-हँस फूलों को ठुकराते, हम काँटों पर सोते-सोते।

अधम पाप का ताडंव नर्त्तन, कुटिल क्रूर कैसा यह मर्दन।
लोभ अपरिमित कलुषित कंचन, धर्म द्वन्द्व प्रतिद्वन्द्व पुरातन।

मनुज चित्र की अमिट कालिमा, नित निज नयन नीर से धोते।
हँस-हँस फूलों को ठुकराते, हम काँटों पर सोते-सोते।

अति हृदयहीन यह चिर विधान, यह काल चक्र, यह आसमान।
घातक यंत्र नियंत्रण महान, अभिलाषाओं का यह श्मशान।

इस ऊसर नीरस खेती में, नित हम प्रेम बीज को बोते।
हँस-हँस फूलों को ठुकराते, हम काँटों पर सोते-सोते।

तुम बनते प्रिय राजा रानी और तुम्हारा मैं अभिमानी।
प्रेम राज्य की कर अगुवानी, रच जाते हम अमर कहानी।

गाते अविरल हम प्रेम-गान, युग-युग प्रणय भार को ढोते।
हँस-हँस फूलों को ठुकराते, हम काँटों पर सोते-सोते।

स्वर्ग बसा देता मैं भू पर,
यदि तुम मिलते, मेरे होते।

बार बार

मैं कह न सकूँगा बार बार, तुम सुन न सकोगी बार बार
बस कहने दो तुम एक बार, दुख गाथा मेरे जीवन की।
कितनी असीम, कैसी अपार, सुन्दरी सुन लो तुम एक बार।
मैं कह न सकूँगा बार बार।

मैं जितना रोता जार जार, तुम हंसती उतनी सहकार।
सखि, तेरे कोमल गातों में, कितना निष्ठुर निर्दय विचार।
क्या सुन न सकोगी एक बार, मैं कह न सकूँगा बार बार।

यह दुख से छहल बार बार, केवल दुख की ही यादगार।
संगीत नहीं इस बाजे में, यह टूटे दिल का अधम तार।
क्या सुन न सकोगी एक बार, मैं कह न सकूँगा बार बार।

क्या समझ सकोगी प्रणय भार, बाले ! तुम हो कितनी गंवार।
तुम्हें सुना सकता मैं कैसे, अपने आकुल दिल की पुकार।
बस रह जाता तुमको निहार, मैं कह न सकूँगा बार बार।

अयि मेरे दिल के ताजदार, मैं घायल हूँ दुखिया बीमार।
बैठ सको तो दम भर बैठो, फिर न सुनोगी यह पुकार।
अयि प्रेम विटप के होनहार ! मैं कह न सकूँगा बार बार।

मैं माँग रहा हूँ कर पसार, देखूँ तुम हो कितनी उदार।
इक प्यास बुझा लूँ युग-युग की, तुम देते जाओ द्वार-द्वार।
हाँ, रुको रुको मत एक बार, मैं कह न सकूँगा बार बार।
सुन्दरि ! सुन लो तुम एक बार,
मैं कह न सकूँगा बार बार।

ठौर ठिकाना

ठौर ठिकाना अपना तुमको, हम बतलायें, क्यों बतलावें ?
भेद भरे जीवन को अपने खोल दिखायें, क्यों बतलावें ?
हम राह प' अपनी जाते हैं, तुम देख-देख कर हँसते हो ।
हम जीवन खूब समझते हैं, तुम पागल हमको कहते हो ।
इस जीवन की अंधियारी में, हम देख सकें हैं थोड़ा सा ।
इस टेढ़ी-मेढ़ी अगम डगर पर, चल पाये हैं थोड़ा सा ।
इस जीवन के दुखमय काँटे, बस उलझ रहे हैं तो हमसे ।
इस तिलस्म के मर्म अनोखे, यदि सुलझ रहे हैं तो हमसे ।
तुम खेल रहे हो दुनिया से, यह दुनिया हमसे खेल चुकी ।
हम विपदायें झेल चुके, यह विपदायें हमसे झेल चुकी ।
है अपनी-अपनी राह अलग, हम राह प' अपनी जाते हैं ।
तुम दुनिया को अपनाते हो, हम निज को आप भुलाते हैं ।
"जीते हैं", इन दो शब्दों में सारा अपना हाल बयां है ।
पूछ रहे हो राही से क्यों, दौड़ धूप का अन्त कहाँ है ?
इस तार-तार गुदड़ी को हमने, फटी पुरानी कब जाना ।
यह चिर नवीन जामा अपना, पहन रहे हैं शाहाना ।
और हमारी अद्भुत झोली में क्या है, कोई क्या जाने ।
कुछ सूखी झुलसी कलियाँ हैं, जो टूट गये वे पैमाने ।
राख बना मलते हैं तन पर, फूंक-फूंक अरमानों को हम ।
जलकर आप जला देते हैं, पाठ पढ़ा परवानों को हम ।
जीवन क्या मरने की पीड़ा, क्या मौत सुनहरा जीवन है ?
तुमको क्यों यह भेद बतावें, क्या है कीचड़, क्या कंचन है ।
कहाँ हमारा घर बिस्तर, हम सो जाते टुक छाँह जहाँ है ।
जिस ओर नजर जाती जाते, हम दुखियों की राह कहाँ है ?
खून हमारे अरमानों का संसार छिपायेगा कब तक ?
इन छिपे हुए अंगारों को संसार बुझाएगा कब तक ?
कैसा चैन, कहाँ का रोना, दूर बहुत हैं दोनों से ।
क्या पाना, अब क्या है खोना, दूर बहुत हैं दोनों से ।
माँग बहुत थीं अपनी तुमसे, अब उन माँगों को भूल गए ।
बातें थीं जो तुमसे कहते, अब उन बातों को भूल गए ।

तुमको, जग को, भूल गए हम, भूल गये, हाँ, भूल गये हम ।
मत पूछो वह दुखद कहानी, सुख की घड़ियाँ भूल गये हम ।
भोले हो, दुनिया को भोली यदि समझ रहे हो तो समझो ।
अभी तुम्हारी आस लगी है, यदि उलझ रहे हो तो उलझो ।
हमको तुम अपने सुख सपनों में, बाधायें मत लाने दो ।
हम अपनी राह प' जाते हैं, कुछ मत पूछो अब जाने दो ।
अरमानें अब शेष नहीं है, हमको अब दुख दाह कहाँ है ?
अब माँग नही तुमसे, जग से, हम दुखियों की चाह कहाँ है ?
ठौर ठिकाना अपना तुमको, हम बतलाएं क्यों बतलाओ ?
भेद भरे जीवन को अपने खोल दिखाएं, क्यों बतलाओ ?

बिहार मेरा

रट रहा है तू बिहारी,
क्यों बिहार बिहार मेरा ?

क्या नहीं पंजाब अपना, क्या नहीं बंगाल तेरा ?
इन सबों को भी चला क्यों, देख क्या है हाल तेरा ?
क्या न निज काशी मदीना, क्या नहीं अड्यार तेरा ?
क्या नहीं है चीन अपना, क्या नहीं जापान तेरा ?
सोच तो किसका अरब है, क्या नहीं ईरान तेरा ?
तू बता ब्रीटेन किसका, और किसका अमरिका है ?
रोम बर्लिन क्या न तेरे, रूस क्या घर गैर का है ?

रट रहा है तू बिहारी,
क्यों बिहार बिहार मेरा ?

एक क्या राजेन्द्र अपना, औ' जवाहर दूसरे का ?
क्या नहीं गाँधी 'भी तेरे, सरहदी वह खाँ पराया ?
दास किसके, बोस किसके, लाजपत थे नाज किसके ?
थे तिलक गोखले किसके, मालवी आजाद किसके ?
एक गौतम गर्व अपना, राम क्या कुछ गैर सा था ?
था मुरारी अजनबी क्या; औ' पराई नीति गीता ?
भक्त ईसा क्या न तेरे, क्या न अपने वह नबी थे ?
क्या किसी के और शंकर, क्या कपिल भी अन्य ही थे ?
क्या न रवि पर नाज अपना, या रमन से प्यार तेरा ?

रट रहा है तू बिहारी,
क्यों बिहार बिहार मेरा ?

भूजता है तू बिहार, मूर्ख अज्ञानी न बन तू ।
एक सरिता बन बिहारी, कूप का पानी न बन तू ।
बुद्ध का हामी बना है, विश्व-व्यापी प्रेम उनका ।
कर न परिमित यो बिहारी, तू अपरिमित नेम उनका ।

कह रहा कि अशोक अपना, यह कहाँ अधिकार तेरा ?
सब जगत से प्यार उनको, और एक बिहार तेरा ?
अमर विद्यापति सुकवि के गान क्या तू गा सकेगा ?
क्या भला संकीर्ण कूजे में समंदर ला सकेगा ?
बन न हिन्दी, बन न हिन्दू, बौद्ध, मुस्लिम औ' ईसाई।
आदमी है, आदमी बन, एक खुदा है, एक खुदाई।
सब मनुज परिवार तेरे, है सकल संसार तेरा।

रट रहा है तू बिहारी,
क्यों बिहार बिहार मेरा ?

नौजवानों से

बिजलियाँ मड़रा रही हैं, टूट जाने के लिये ।
चार दिग् शोले लिपटते हैं, जलाने के लिये ।
बांध झंझानिल अनल, विध्वंस का विकराल दल ।
आज ताण्डव नृत्य हित, हैं हो रहे विह्वल विकल ।

गर्भ से भू के भयानक, नभ विदारक गर्जना ।
व्योम शस्त्रागार का है, विकट भू को सूचना ।
इस रण स्थल में खिलाड़ी, खेलना हो, आ उतर ।
रक्त में उत्तेजना हो, आ समर में कस कमर ।

चाहता है तू कि सौदा, हाट से इस मोल ले ।
प्राण का सिक्का चला, हर माल है अनमोल रे ।
नौजवानी का तकाजा, तुझसे क्या है, ध्यान दे ।
रक्त से वेदी सजा ले, प्राण का बलिदान दे ।

वज्र-सा करले कलेजा, निज रगों में भर अनल ।
क्रान्तिमय जीवन बना तू, नियति रेखा दे बदल ।
रूढ़ियाँ सदियों की, तू एड़ी लगा, औ' तोड़ दे ।
और धारें तीव्र नदियों की, अकड़कर मोड़ दे ।

सामने से पर्वतों को कह कि रस्ता छोड़ दें ।
और सागर को जता दे, शीघ्र जम पत्थर बने ।
व्योम से ऊँचा अवनि को, तू कहीं स्थान दे ।
औ' धरा के दीप तारे बन उठें, वरदान दे ।

मानवों की शान को तू बंधनों से मुक्त कर ।
कूल तट को तोड़, सरि को सागरों से युक्त कर ।

क्रान्ति दूत

अयि बूंद लहू की, आगे आगे चल ।
अयि शान शहीदी, आगे आगे चल ।

किस सपूत के नस में दौड़ी, किस दिल में तू पली बढ़ी ?
निज माता की देख गुलामी, किन आँखों से टपक पड़ी ?
किसकी छाती फटी, अरी तू किस छाती से आ निकली ?
किसका सर बलिवेदी चढ़ा, तुम किस गर्दन से ढुलक पड़ी ?

अयि बूंद लहू की, आगे आगे चल ।
अयि शान शहीदी, आगे आगे चल ।

वीरों की तू अमिट निशानी, जां बाजों की जान बनी ।
सर दे दे जो चढ़े शूलि पर, उनका अनुसंधान बनी ।
अयि बूंद शहीदों की खूं की निज जननी की आन बनी ।
माँ बहनों की लाज बचे, री तू जलता बलिदान बनी ।

अयि बूंद लहू की, आगे आगे चल ।
अयि शान शहीदी, आगे आगे चल ।

आजादी के सुर्ख पताके, बन्दी माँ की ममता री ।
ओ खुनी कतरे बढ़ चल, चल स्वतंत्रता की चिनगारी ।
ओ, माता के, रिक्त गगन के, एक चाँद, इक उजियारी ।
नवयुग के आशा प्रतीक, माँ भारत के पूज्य पुजारी ।

अयि बूंद लहू की, आगे आगे चल ।
अयि शान शहीदी, आगे आगे चल ।

ऐ दूत क्रान्ति के खूनी कतरे सरदे कर सरदार चले ।
पीछे एक सैलाब चलेगा, आगे बल्लम बर्दार चले ।
चले, शहीदों की टोली पर, गोली या तलवार चले ।
बन्दी माता देख रही, किस–किसपर कितने बार चले ।

आयि बूंद लहू की, आगे आगे चल ।
आयि शान शहीदी, आगे आगे चल ।

लुटे हमारे भरे खजाने, धन वैभव भर द्वार लुटे ।
बने बिलखे आज भारती, अपने शस्त्रागार लुटे ।
गौरव मान मिटे सदियों के, ऋषियों के सुविचार लुटे ।
लुटी लाज अबलाओं की भी, सुख के पारावार लुटे ।

आयि बूंद लहू की, आगे आगे चल ।
आयि शान शहीदी, आगे आगे चल ।

मर जाने की ज्योति जगाई, इन मुर्दे जीनेवालों में ।
पशुता कायरता को फूंके, मर्द बने मर्दानों में ।
जीवन का बस एक लक्ष्य, वह माता की मुस्कानों में ।
मर मिटने का एक ढंग आजादी के दीवानों में ।

आयि बूंद लहू की, आगे आगे चल ।
आयि शान शहीदी, आगे आगे चल ।

परिचय

मैं प्रतिक्षण, प्रतिपल, जीवन में त्योहार किये जाता हूँ ।
'कल क्या होगा' इन बातों को निस्सार किये जाता हूँ ।
मैं भोली-भोली आँखों का, एतबार किये जाता हूँ ।
निज प्राणों को, मुस्कानों पर, बलिहार किये जाता हूँ ।

क्षण भंगुर है यौवन सुषमा, इनकार किये जाता हूँ।
मैं दिल से प्रेमाघातों को, स्वीकार किये जाता हूँ।
इस उसर नीरस खेती को, गुलजार किये जाता हूँ।
मैं हृदय के जलते दागों का, शृंगार किये जाता हूँ।

सुख की निधियाँ, जग को देखा, क्यों दुख का अनुमान करूं ?
जीवन के प्रतिक्षण का, अनंत विस्तार किये जाता हूँ ।
जीता मधु मुस्कानों पर मैं, मरता हंस—हंस आनों पर ।
इस दुनिया के रंग मंच पर, खिलवाड़ किये जाता हूँ ।

दिल पायल के झंकारों पर, झंकार किये जाता हूँ।
मैं साकी के संकेतों का, सत्यकार किये जाता हूँ।
जिस घोर नदी को काल भंवर में, यह जग डूबा जाता है।
मैं जीवन तरणी उसके ही, मंझधार किये जाता हूँ।

जब हवा तूफानी चलती है, विकराल बवंडर उठते हैं,
मैं विहंस हवाले मौजों के, पतवार किये जाता हूँ ।
फूलों से है प्यार बहुत, पर काँटो से कुछ द्वेष नहीं ।
तकरार किये जाती दुनियां, मैं प्यार किये जाता हूँ ।

बुल-बुल सीखे प्रणय तराना, अलिगण फूलों पर गाना,
इसलिये चमन की गोलियों में, गुंजार किये जाता हूँ।
पाषाण हृदय जिसको तोड़े, फूंके जिसको निष्ठुरता,
अरमानों का वह रंग महल, तैयार किये जाता हूँ।

यह जग क्यों कर रोता है, बस इसीलिये मैं रोता हूँ।
सुख सुषमा की सजी दूकानें, बाजार किये जाता हूँ।
फूलों की नर्मी पत्थर में, ज्वालों में जलधार कई,
हिमकण में, विद्युत की लहरें संचार किये जाता हूँ।

कण-कण में एक हिमालय है, सागर बूंदों में अंटता।
कण-कण पर आज निछावर मैं, संसार किये जाता हूँ।

मैं प्रतिपल, प्रतिक्षण, जीवन में
त्योहार किये जाता हूँ।

उसपार

तुम कैसे उसपार रह गये, मैं कैसे इसपार आ गया !
और हमारे बीच कहाँ से यह झूठा संसार आ गया !
गली-गली की खाक छानता, मंजिल-मंजिल हार मानता ।
डगर-डगर अनजान फिरा, घर-घर को देव-स्थान जानता ।

निर्झरणी के कल-कल स्वर में, शशि-किरणों की लोल लहर में
जगता आते पाँव तुम्हारे, वल्लरि किसलय के मर्मर में
पर तुम तो उसपार रह गये, मिथ्या जग झंकार आ गया
और हमारे बीच कहाँ से यह झूठा संसार आ गया

पाप-पुण्य का मेला-ठेला, धर्म-कर्म का झूठ झमेला ।
क्रूर शिलाओं की दीवारें, जपतप यम नियमों का खेला ।
अगम नियम पावन बंधन, स्वर्ग-नर्क का कल्पित सृजन ।
कदम-कदम बेड़ी जंजीरें, बन्दी जीवन, बन्दी चिन्तन ।

कैसे आऊँ पार जहाँ तुम, बाधाओं का ज्वार आ गया
और हमारे बीच कहाँ से, यह झूठा संसार आ गया
फूलों में मुस्का जाते भी, सरि में गुनगुन गा जाते भी
कण-कण में तुम कंपन भरते, तारक ज्योति दिखा जाते भी

रस-गंधों की मृदुल स्राव में, सुषमाओं के हाव भाव में,
झाँक-झाँक हो घात लगाते, नयन शरों के दाव दाव में ।
पर मुक्त रहे तुम निर्मोही, मैं बन्दी इस पार आ गया ।
और हमारे बीच कहाँ से, यह झूठा संसार आ गया ।

आशाओं का तार तोड़ दूँ, झूठा व्रत त्योहार तोड़ दूँ
आग लगा दूँ अरमानों में, बसा हुआ बाजार तोड़ दूँ
क्या अपना आकार तोड़ दूँ, जग-जीवन आधार तोड़ दूँ
मायावी इक बार बोल दो, मैं क्षण में संसार तोड़ दूँ
पर तुम निष्ठुर उस पार रहे, मैं भूला इस पार आ गया ।
और हमारे बीच कहाँ से, यह झूठा संसार आ गया ।

स्वार्थ-कलश

तीर पर, कछार पर, सिंधु के किनार पर,
ज्वार से, दहार से, यह घड़ा भरा नहीं।
यह अनादि काल से, एक ही समान है।

आदि कुंभकार के, सृष्टि चक्र पर अरे,
खुद बना ढला विवश, हाय खुद गरज कलश।
हाथ-हाथ बढ़ चला, माथ-माथ चढ़ चला,
पर किसी प्रकार से, यह घड़ा भरा नहीं।
यह कला विधान का, उच्चतम प्रमाण है।

राजसी निवास पर, शूर वीर वास पर,
स्वर्ण से, प्रवाल से, सिंधु के जमाल से,
मणि, जवाहरात से, शक्ति की बिसात से,
राज के प्रसार से, यह घड़ा भरा नहीं।
शाह हो, फकीर हो, एक ही ब्यान है।

कांतियां, जवानियां, रंग रूप बानियां,
चातुरी ब्यानियां, व्यर्थ लंतरानियां,
प्रेम की पुकार से, धर्म के प्रचार से,
वेद की गुहार से, यह घड़ा भरा नहीं।
बस, इसी उधेड़-बुन में जगा जहान है।

अर्थ धर्म काम या मोक्ष की विडंबना,
व्यर्थ स्वप्न-वंचना, स्वर्ण-लंक सृजना,
शक्ति के तड़ाग पर, अर्थ के तलाब पर,
अल्प इस फुहार से, यह घड़ा भरा नहीं।
यह घड़ा सदैव से, सर्वथा समान है।

देशरत्न

(१)

कौन हमारी ज्योति-प्रभा को, जग में दिन-दिन फैलाया था ?
कहाँ-कहाँ से तिनके चुन-चुन, फिर किसने नीड़ सजाया था ?
लयहीन बिहारी बाजे में, इक नौ-बिहार की लय भर दी ?
कण-कण का बल संजों-सजोंकर, बुनियाद नये घर की धर दी ?
वह त्याग तपस्या का जादू, जो दौड़ चला था, किसका था ?
हृदय-हृदय में कौंध गया जो, इक बिजली-सा, किसका था ?
अब काला-काला क्या उठ-उठकर, आज गगन पर छाता है ?
क्या देशरत्न सचमुच हमसे कुछ अब खिंचता सा जाता है ?

(२)

वर्धा-यग की सिद्धि में तो इक वही पुजारी काफी था।
औ' सरहद के संचालन को हुक्म गफ्फारी काफी था।
सी० पी० की टेढ़ी उलझन को सरदार सहज समझा लेता।
खरे-खरे बालों को कुछ कह, खरा सुना, समझा लेता।
तकरार बिहारी बंगाली तो, दर पर हल हो सकती थी।
घर की बात घर ही पर होती, फिर और सहल हो सकती थी।
आदर्श हमारा भूल गया, पग पथ से हटता जाता है।
क्या देश रत्न सचमुच हमसे कुछ अब खिंचता सा जाता है ?

(३)

सोने के पींजड़े में चिड़िया, आजाद तराना भूल गई।
शर्दूल ने सत्तू को चखकर, अब आग चबाना भूल गई।
अर्जुन ने रण छोड़ दिया, औ गांडिव कर से दूर पड़ा है।
कृष्ण विमुख हो चला किधर, अब कैसा दुर्दिन आन खड़ा है ?
अब कुटियों की है खोज हमें, जो महलों को ठुकराते थे।
दस रुपये को बिक जाते हैं, जो आन पे' हम मिट जाते थे।
आज शिखर से गिरते हमको, वह देख-देख शर्माता है।
क्या देशरत्न सचमुच हमसे कुछ अब खिंचता सा जाता है ?

जातिवता के नीच झमेलों में रह जावें हम न उलझकर,
काट न डालें जीवन तरू को, फूंक न डालें अपना घर दर।
फेंक न कूड़ा सूर्य चांद पर, सब तेरे ही सर आएगा।
सीख स्वार्थ पर काबू पाना, चेत बिहारी, पछतायेगा।
छूट नहीं सकता वह हमसे, जो नाज हमीं पर करता है।
जिस ओर बढ़े हम जाते हैं, सोच--सोच शायद डरता है।
फिर बार--बार 'योगी' के यह प्रश्न क्यों दिल में आता है?
क्यों देशरत्न सचमुच हमसे कुछ अब खिचता सा जाता है?

पागल

मैं उलटा-पलटा कह लूंगा, तुम उलटा-पलटा कहने दो।
मैं सीधा-सीधा कर लूंगा, तुम उलटा-उलटा रहने दो।
इस गाने में मीठास नहीं, तुम लय की बातें जाने दो।
यह टूटे तार का गाना है, मैं जो गाता हूँ गाने दो।

मैं प्रीति व्यथा का मारा हूँ, तुम प्रेम गगन का तारा हो।
मैं हर दर का फटकारा हूँ, तुम सुन्दर जग का प्यारा हो।
तुम अपने नाजुक दिल पर मुझे, चोट नहीं पहुँचाने दो।
तुम दिल की बातें मत पूछो, मैं जो गाता हूँ गाने दो।

मैं तो एक भिखारी हूँ, तुम सुन्दरता का राजा हो।
मैं केवल एक सवाली हूँ, तुम दानी हो, तुम दाता हो।
चम्बल में चाहो दे डालो, या मुझे सदा कर जाने दो।
मैं पागल हूँ, कुछ मत पूछो, बस जो गाता हूँ, गाने दो।

है फटी हुई गुदड़ी मेरी, यह सब चिथड़े अफसाने हैं।
टुकड़े भरे पड़े झोली में, यह सब टूटे पैमाने हैं।
दौड़ा जहाँ जिधर जाता हूँ, तुम उसी तरफ अब जाने दो।
मैं जो कहता हूँ, कहने दो, मैं जो गाता हूँ, गाने दो।

जवानों से

तुम जो चाहो तो, पहाड़ों को उड़ा सकते हो ।
तुम जो चाहो तो, सितारों को गिरा सकते हो ।
फ़ौजें लाखों की, रणस्थल पे, बिछा सकते हो ।
हर तना शत्रु का, मिट्टी में मिला सकते हो ।

तुम जो चलते हो तो, क़यामत की बला चलती है ।
तुम जो चलते हो तो, दुश्मन की कज़ा चलती है ।
तुम चले या कि चली बाँध कतारें बिजली ।
और उठ-उठ के शहीदों की दुआ चलती है ।

हौसले दुश्मन के अभी हो जायें काफ़ूर ।
इस तरह दिल में लगन चाहो तो, लगा सकते हो ।
तुम जो चाहो तो, पहाड़ो को उड़ा सकते हो ।
तुम जो चाहो तो, सितारों को गिरा सकते हो ।

शेर दिल तुम सा जवानों, न कोई और हुआ ।
मर्द मैदान दीवानों, न कोई और हुआ ।
थे तुम्हीं, और नहीं था कोई, भीम और अर्जुन ।
वीर तुम सा मस्तानों, न कोई और हुआ ।

अपने साहस को अभी तुम भी नहीं आंक सके ।
तुम जो चाहो तो हिमालय को हिला सकते हो ।
तुम जो चाहो तो, पहाड़ों को उड़ा सकते हो ।
तुम जो चाहो तो, सितारों को गिरा सकते हो ।

पासवाँ तुम हो सपूतो, अरे रहबर तुम हो ।
हिन्द माता जिसे तकती थी, बहादुर तुम हो ।
तुम वह शोले हो, जला सकते जमीं और फलक ।
ज़लज़ला हो, कि तूफान की महशर तुम हो ।

ठोकरों से, अभी दुश्मन को उड़ा सकते हो।
अपने तेवर से, जमाने को डुला सकते हो।
तुम जो चाहो तो, पहाड़ों को उड़ा सकते हो।
तुम जो चाहो तो, सितारों को गिरा सकते हो।

वीरता जिससे सँवरती है, वह दुल्हा तुम हो,
शान राणा की तुम्हीं, मान शिवा का तुम हो,
गर्व से देख रहीं तुमको है झाँसी रानी,
हिन्द माता के शहीदों की तमन्ना, तुम हो।

तुम जो चाहो तो, बहा डाले जमीं को पानी।
ऐसा तूफान समन्दर में उठा सकते हो।
तुम जो चाहो तो, पहाड़ों को उड़ा सकते हो।
तुम जो चाहो तो, सितारों को गिरा सकते हो।

विजय ध्वजा

स्वतंत्र गंगधार पर,
स्वतंत्र सिंधु-ज्वार पर !
अभीक शृंग पर अजर,
विजय ध्वजा फहर फहर !!

स्वतंत्रता की जीत पर, व दासता की हार पर !
अजेय हिम किरीट पर, अनूप हिन्द द्वार पर !!
दिशा प' औ दिगंत पर, असीम पर, अनंत पर !
पुनीत जय निनाद पर, कुरीतियों के अंत पर !!
उछल, उछल, विजय ध्वजा ! अरी, फहर मयंक पर !
अभीरू लोक-लोक में लहर-लहर अतंक पर !!

प्रभंजनों के भाल पर,
चरण अड़ा फहर-फहर !

निशांत को प्रदीप्त कर, स्वतंत्रता-उषा खड़ी !
तिमिर का जाल काटकर, प्रभानिकर उड़ेलती !!
प्रदान मुक्त पंख का अधीर पंछियों को दे !
तिमिर की कैद तोड़ती प्रकाश के प्रहार से !!
निहार क्रूर बेड़ियाँ पिघल रही है किस तरह !
स्वदेश में विजय ध्वजा मचल रही है किस तरह !!

नगर-नगर यह दीपिका,
जला-जला फहर-फहर !!

तूफान पर सवार हो, बवंडरों का साथ ले !
निशंक हो बढ़े चलो, विजय प्रतीक हाथ ले !!
घटा को तोड़ते हुए, व' बिजलियों को मोड़ते !
चल चलो निडर अकड़, विजय ध्वजा फहर चले !!
वसुंधरा हो डोलती, गगन अरे हो डोलता !
स्वदेश-विश्व केन्द्र पर, अडोल यह विजय ध्वजा !!

जमीन आसमान को,
हिला-हिला फहर-फहर !!

गगन झुका, धरा झुकी, झुके हुए हैं देवता !
प्रताप की भुजा झुकी, नमन अहो विजय ध्वजा !!
शिवा का खड्ग चमचमा, निकल पड़ा मयान से !
नमन-नमन विजय ध्वजा, झुका हुआ है सामने !!
मजार में शहीद की उछल रही है हड्डियां !
दिये हुए हैं लाख-लाख प्राण की आहुतियां !!

विजय ध्वजा शहीद को
गले लगा, फहर-फहर !!

गगन के दीप दे बुझा, चमक रही वसुन्धरा !
शहीद के प्रकाश की नई है ज्योति--श्रृंखला !!
नई प्रदीप्ति में बसा, नया गगन, नई धरा !
निशा नई, नया दिवा, नई रचा परंपरा !!
अरे ! तू छीन शक्ति को, उतार शारदा को ला !
नई विभुतियों को ले, स्वदेश को सजा--सजा !!

सगर्व जीत---घोषणा
सुना--सुना, फहर--फहर !

मचल चली जवानियां, शिला में स्वप्न ढालती !
प्रचण्ड अग्नि दाह में, गुलामियों को बालती !!
नवीन चित्र विश्व का, बना रही है तूलिका !
अजस्र अंतरिक्ष पर नई भरी है कल्पना !!
प्रदीप देवलोक से उतर रहे हैं देवता !
तुझे सहस्र वंदना, विहर--विहर अमर ध्वजा !!

अमोघ चक्र भाल पर,
सजा--सजा, फहर--फहर !

कृष्ण

(१)

तेरी तस्वीर खींच पाये, अविद्या--तूलिका कैसे !
भरी क्यों ज्योति की रेखा, तिमिर घन रश्मियाँ कैसे !
तरी टूटी, अगम सागर, उठाऊँ किस तरह लंगर !
चलूँ मैं मापने कैसे, औ' क्या लेकर बृहत अम्बर !
विचारों में न खिंच पाये, उतर आये न मानस पर !
गढ़ूँ भी चित्र तो कैसे, भरूँ क्या छंद के भीतर !
बनाऊँ कौन सा मंदिर, सजाऊँ सत्य शिव सुन्दर !
बसा लूँ नयन में कैसे, जगाऊँ किस तरह अन्तर !

(२)

न पहुँची कल्पना तुझ तक, न तुझको ज्ञान ने जाना !
थके विज्ञान--अन्वेषण, तपोबल ने न पहचाना !
बड़े योगी, यति ने क्या, पैगम्बर और' नबी ने क्या !
किसी ने क्या, तुझे जाना, अरे क्यों, वेद ही ने क्या !
सनातन सत्य का सांचा, अलौकिक चित्र माया का !
समझ पाते न हम कौतुक पुरुष का और छाया का !
छिपा सकते नहीं जिसको धरा नीचे, गगन ऊपर,
छिपा लूँ नयन में कैसे, जगाऊँ किस तरह अन्तर !

(३)

न समझा धर्म अर्जुन ने, न समझा कर्म अर्जुन ने !
सुना उपदेश गीता का, न समझा मर्म अर्जुन ने !
नहीं राधा निरंजन को, यशोदा ने, न नंदन को !
न समझा गोप बाला ने, अलौकिक प्रेम नर्तन को !
न यमुना मान बंसी का, न सखियाँ शान बंसी की !
समझ पाई न राधा ने, अनोखी तान बंसी की !
बजी बंसी, तरंगित नभ, हिलोरें ले रहे सागर !
बिठा लूँ नयन में कैसे, जगाऊँ किस तरह अन्तर !

(४)

धरे अंगुली प' गोवर्धन, मचल जाता है जब मोहन !
चरण पर देवता झुकते, सिहर उठता है इन्द्रासन !
रुकी यमुना की हैं धारें, कन्हैया फूंकता बंशी !
रुके हैं चाँद औ' तारे, कन्हैया फूंकता बंशी !
खिंचा सा स्वर्ग आता है, कन्हैया फूँकता बंसी !
नभांगन गूँज जाता है, कन्हैया फूँकता बंसी !
टंगी है टेर पर आँखें, उछलते प्राण तानों पर !
संभालूँ नयन में कैसे, जगाऊँ किस तरह अन्तर !

(५)

परिधि में रास की तेरी, नहीं ब्रज नाचता केवल !
क्षितिज भी नाच जाता है, फड़क उठता है नभमंडल !
रही बज पैंजनी तेरी, कि जग झंकार उठता है !
रही बज पैंजनी तेरी, कि सृजनहार उठता है !
रही बज पैंजनी तेरी, कि नये नक्षत्र ढलते हैं !
रही बज पैंजनी तेरी, कि जड़-चेतन सम्भलते हैं !
उमड़ते चल रहे बादल, ठुमकते आज विश्वंभर !
नचा लूँ नयन में कैसे, जगाऊँ किस तरह अन्तर !

(६)

अधर पर बाँसुरी बजती, अलंकृत जग हुआ जाता !
अनोखी बाँसुरी बजती, अलंकृत नभ हुआ जाता !
यही वंशी, अमर-ध्वनि यह; कि युग निर्माण होता है !
कि तारक दीप जल उठते, प्रकट दिनमान होता है !
नियन्त्रण विश्व का होता, इसी आधार पर पल पल !
संवरते चित्र मिटते भी, सदा यह चित्रपट अविचल !
यही निस्सीम ध्वनि सागर, तरंगित विश्व तरी जिसपर !
सजा लूँ नयन में कैसे, जगाऊँ किस तरह अन्तर !

(७)

अलौकिक प्रेम का जादू, मधुर मुस्कान में छिपता !
सनातन नेम का जादू, मधुर मुस्कान में छिपता !

अटल संहार का जादू, मधुर मुस्कान में छिपता !
अमर कर्तार का जादू, मधुर मुस्कान में छिपता !
इसी मुस्कान में माधव, पुरातन भेद छिपते हैं !
इसी मुस्कान में केशव, चिरंतन भेद खुलते हैं !
सिमटकर शक्तियाँ जग की, अधर पर आ बनी मनहर !
बुना लूँ नयन में कैसे, जगाऊँ किस तरह अन्तर !

(८)

दुहाई द्रौपदी की तू, दुशासन बाहुबल तू ही !
युधिष्ठिर की बचाई जो, तो दुर्योधन अमल तू ही !
इधर जो तीर अर्जुन के, उधर कौरव सबल तू ही !
जलाता तू, बुझाता तू, सलिल तू ही, अनल तू ही !
अरे मोहन, अरी राधा, कि तू अर्जुन, कि तू गीता !
रचा कैसे महाभारत, अरे हारा कि तू जीता !
दिशाओं से न घिर पाता, जिसे समझे नहीं सुरनर !
रचा लूँ नयन में कैसे, जगाऊँ किस तरह अन्तर !

जिन्दगी

जिन्दगी इधर चली !
और हम उधर चले !!
जिन्दगी किधर चली !
आह, हम किधर चले !!

हम न साँस-भर चले !
हम न नाम कर चले !!
काम था पड़ा रहा !
काम हम न कर चले !!
जिन्दगी अकड़ चली !
और हम अकड़ चले !!
जिन्दगी किधर चली !
आह, हम किधर चले !!

एक अधीर चाँदनी—
थी हमें पुकारती !!
हम न कान कर सके !
वह नहीं ठहर सकी !!
वह अजब डगर चली !
हम अजब डगर चले !!
जिन्दगी किधर चली !
आह, हम किधर चले !!

जी चले न मर चले !
जिन्दगी न कर चले !!
थी असीम बेबसी !
हर कदम पर डर चले !!
दो कदम इधर चले !
दो कदम उधर चले !!
जिन्दगी किधर चली !
आह, हम किधर चले !!

जाम जिन्दगी भरो—
प्रेम ले खड़ा रहा !!
आँख देखती रही !
हाथ बढ़ नहीं सका !!
जाम वह किधर चला !
फेर हम नजर चले !!
जिन्दगी किधर चली !
आह, हम किधर चले !!
जिन्दगी पुकारती !
चीखती — निहारती !!
आह में गरीब की—
जिन्दगी कराहती !!
किंतु बेअसर चले !
हम चुरा नजर चले !!
जिन्दगी किधर चली !
आह, हम किधर चले !!
छूटती न दासता !
टूटतीं न बेड़ियाँ !!
आज दान जिन्दगी—
रक्त औ' जवानियाँ !!
माँगती समर चली !
हम नहीं समर चले !!
जिन्दगी किधर चली !
आह, हम किधर चले !!
खोजते — पुकारते —
देव-देवता चले !!
ढूँढ़ते न जिन्दगी !
ढूँढ़ते खुदा चले !!
व्यर्थ बेखबर चले !
मंद हम नजर चले !!
जिन्दगी किधर चली !
आह, हम किधर चले !!

होली

जब बाग में फूल न होता है, तो बुलबुल चुप हो रोती है।
जब दूर कहीं साजन होता, तो नींद न आंखों आती है।
मैं पीला पड़ता जाता हूँ, तेरे हाथ अबीर की झोली है।
मैं देख-देख घबड़ाता हूँ, औ' तू कहता है होली है।

मस्त-मस्त पछुआ है चलती, मस्ती में पत्ती डाली है।
है नई उमंगे, नई लताएँ, झूम रही मतवाली है।
नये-नये दोपट्टे, सारी, दिखती नई-नई चोली है।
शायद यही निरखता है तू, कह उठता है होली है।

रंग गुलाल वही है माना, वही फाग है, गाने हैं।
फूल वही है, वही है माला, पर बिखरे सब दाने हैं।
भारत अब आजाद नहीं है, राष्ट्रों बीच ठिठोली है।
शर्म की लाली मुँह पे' छायी माता के, नहीं होली है।

हर रोज नई बरबादी है, हर रात नया इक फंदा है।
जो दिलदादे आजादी है, वह जेल का फौरन बंदा है।
हैं तौक गुलामी हर गरदन पर, औ' कैदी की टोली है।
भारत रत्न है जेल के अन्दर, तू कहता है होली है।

गैर देश में हिन्द का सोना, रोज रवाना होता है।
इधर भूख से बच्चा-बच्चा, बिलख-बिलख कर रोता है।
हम हैं और गुलामी अपनी, रिश्ता दामन चोली है।
रोने तक आजाद नहीं हैं; तू कहता है होली है।

सर अपने कुमकुमे बनेंगे, गरदन की बनेगी पिचकारी।
माता की बलिवेदी चढ़ेंगे, सुर्ख नदी होगी जारी।
जंजीर गुलामी काटेंगे, यह अटल हमारी बोली है।
भारत माँ आजाद जो होगी, 'योगी' भी कहेगा होली है।

मसीहा

(२)

दर्द यह कैसा मसीहा, दो मुझे इतना बता तुम !
और क्यों अहसान लूँ मैं, अब न दो मुझको दवा तुम !!

क्या बहुत गहरा समन्दर, क्या बहुत ऊँचा गगन है !
नयन में मेरे समाकर देख लो कितनी लगन है !!

तुम न पूछो भ्रमर से, या कहीं कुछ चातकी से !
पूछना चाहो, तो पूछो विवश दिल की बेकली से !!

देखते विद्युत् की चंचल, और पारे लोल को तुम !
हाथ दो मेरे हृदय पर, आज इसको तोल लो तुम !!

देखते तुम चाँद सूरज और बड़वानल भयंकर !
आह ! मेरी आह में ही जल रहा है नील अंबर !!

जल रहा पाताल नीचे, जल रही जगती निरंतर !
हो रहे विस्फोट निशिदिन, उठ रहे कितने बवंडर !!

जल रहे नक्षत्र ऊपर, जल रहा जीवन सरोवर !
जल रहा सौन्दर्य उर का, जल रहे अरमान भीतर !!

अब तुम्हारे होंठ पर देखा नहीं मुस्कान आये !
बुझ न पायें यह जलन, मेरे मसीहा, बुझ न पाये !!

कब तलक अहसान लूँ, मैं अब न क्यों पहचान लूँ मैं !
भेद अपनी वेदना का अब ठनी है, जान लूँ मैं !!

भेद मेरी बेबसी का, अब बता दो वसुमती को !
व्योम को, जल को, पवन को, आज बतला दो सभी को !!

(२)

आज पर्दा चीर डालो, आज घूँघट दो उलट तुम !
भेद दुनिया को समर्पण, खोल दो अब बन्द पट तुम !!

है मुझे यह प्यास कैसी, बुझ न पायी आज तक क्यों !
तुम तलक पहुँचे अगर जो, मुड़ न पायी आज तक क्यों !!

स्वांस पर मेरे निरंतर, विश्व का निर्मान चलता !
और मेरी कल्पना की ज्योति में, दिनमान जलता !!

डोलता मेरे इशारे पर पवन आकाश में है !
तारकों के दीप जलते और ग्रह मिल नाचते हैं !!

नग्न कर मायाविनी को, तोड़ दो जादू पिटारा !
जान ले सम्बन्ध दुनिया आज मेरा औ' तुम्हारा !!

सूर्य का सम्बन्ध उषा से खुले औ' यामिनी से !
सिंधु से संसर्ग शशि का, बादलों का दामिनी से !!

शब्द से नाता गगन का, औ' क्षितिज का मेदिनी से !
रंग को किरणों से क्या है, क्या पवन को रागिनी से !!

भेद युग--युग का खुले, अब सृष्टि का तुम राज खोलो !
अब प्रिये ! लज्जा करो मत, खोल कर मुँह आज बोलो !!

आज कह दो शीश चढ़के, प्यार है मुझको तुम्हीं से !
प्रेम की निर्भीक वाणी, डर रहे हो क्या किसी से !!

खोलदे इस भेद में ही मर्म सृजन हार का तुम !
मर्म जीवन का मरण का, मर्म सुख दुख भार का तुम !!

आज पुलकित हो धरा, नभ और मंगल नाद गूँजे !
आज दिल-दिल में अभय नव प्रेम का संवाद गूँजे !!

आह्वान

बह गयी कौम की कश्ती, अभी साहिल प' खड़े हो।
बच्चे तो नहीं गोद के, सयाने हो, बड़े हो।
मर्दे मैदान निकल आये हैं, खाक डरे हो।
घर में लगी आग है, बिस्तर प' पड़े हो।

रह गई नींद जवानों, जो तुम्हारी ऐसी।
उँगलियाँ तुमपे उठायेगा जमाना कैसी।

ख्वाब गफ्लत से उठो, औ' बाँधो कमर को।
कौन ताकत है, दबायेगी जो राणा के पिसर को?
पत्थर सा बना लो, यही मौका है, जिगर को।
सींचो तो जरा खून से कौमी शजर को।

हाँ, दिखादो तुममें अर्जुन का लहू बाकी है।
उजड़े गुलशन में अभी फूल की बू बाकी है।

हिन्द माता की बलिवेदी प' अपने को चढ़ा दो।
कौमी नारा से तुम हिन्द के पत्थर को जगा दो।
फर्श लाशों की तुम हिन्द की वादी प' बिछा दो।
भारत से मगर बारे गुलामी को उठा दो।

कौन कहती हुई दर पर, ये भिखारिन सी खड़ी है:
'जिस घड़ी के लिये पाला तुम्हें आयी, वह घड़ी है।

कैदखानें को जवानों, तुम मदरसा समझो।
इसको मंदिर, इसे मस्जिद, और कलीसा समझो।
पार लगने के लिए, खद्दर को ही नौका समझो।
गाँधी की हरेक बात को, कौल खुदा का समझो।

जवाहर लाल

ऐ वीर वर जवाहर ! तू राष्ट्र का बलि है।
लेनिन जो रूस का था, तू हिन्द का वही है।
तू ताज है वतन का, मोती से जो बना है।
ये बज्म में है तेरी, जो आज रोशनी है।
इस कौम पस्त हिम्मत, में रूह तूने फूंकी।
जादू से कुछ भरी सी, तेरी यह रहबरी है।
क्यों रो रही है इतना, आँखें तू खोल माता।
मोती जवाहरों से, जब गोद यों भरी है।
आजाद हो रहेंगे, आजाद हो रहेंगे।
भारत के कूचकू से, आवाज उठ रही है।
ऐ चरख आजमा ले, दुश्मन तू अब सम्हल जा।
बुझने की ये नहीं है, जो आग सी लगी है।
जौहर दिखादे अपना, दुनिया को तू जवाहर।
गाँधी ने चाल अपनी, सह पर तेरी चली है।

नमक सत्याग्रह

आज खतरे से भी जाँ बाजे वतन जाते हैं।
सरसे बाँधे हुए ये अपने ये कफन जाते हैं।
तोप नहीं, तीर नहीं, हाथ में शमशीर नहीं।
फिर भी लड़ने को ये जरारें कोहन जाते हैं।
अपनी लाशों से बनायेंगे इमारत कोई,
जिसकी बुनियाद में चुनने को रतन जाते हैं।
जुल्म की आग बुझायेंगे ये खूँ से अपने।
तन से भरने को ये तोपों का दहन जाते हैं।
इन शहीदों से रवाँ खूँन की नदियाँ होंगी,
दिल में ऐसी ये लगाकर के लगन जाते हैं।
यों तो दुनियाँ में बहुत फौज लड़ी हैं अकसर,
पर नई शान से ये शाने वतन जाते हैं।
इनका शुभकाम रहेगा न अधूरा हरगिज,
हम हजारों से ये लेकर के बचन जाते हैं।

तुलसी

(१)

बँध गया सीमा में वह भी,
यह तुम्हारा काम है।
आज बन्दी बनके उतरा,
यह तुम्हारा राम है।
घुल मिले सब एक रस में,
भक्ति ज्ञान औ' योग जप।
प्रेम मद में है छलकता,
यह तुम्हारा जाम है।
राम ही है सुबहे हस्ती,
राम ही फिर शाम है।
तुमने जाहिर कर दिया,
तुलसी तुम्हारा काम है।

(२)

किन सुनहरे शब्द में
वेदों का मानी रख दिया।
तुमने रामायण बना,
गीता का सानी रख दिया।
राम सीता की कहानी में,
खुले दर्शन सभी।
खोलकर तुमने तिलस्मे,
जिन्दगानी रख दिया।
बँट गई गंगा सिमट कर,
यह तुम्हारा जाम है।
बूँद में दरिया छिपा,
तुलसी तुम्हारा काम है।

(३)

राम के साँचे में तुमने,
विश्व को देखा किया।
इन दो हर्फों में ही बाँधी,
तुमने सारी फ़िलसफ़ा।
इन दो हर्फों का कुछ ऐसा,
तुम प' जादू चल गया।
राम ही के रंग में दुनिया,
को तुमने रंग दिया।
भेद जो ऋषियों ने भी
पाया नहीं वह राम है।
स्वर्ग में सीढ़ी लगी,
तुलसी तुम्हारा काम है।

(४)

तुमको मैं कविवर कहूँ,
या भक्त, पैगम्बर, कहूँ।
तुमको होमर के बराबर,
या बहुत बढ़कर, कहूँ?
कम नहीं दर्जा तुम्हारा,
सूर, कालीदास, से।
मैं बहुत घबड़ा रहा हूँ,
तुमको क्या शायर कहूँ?
जिस कदर जाती नजर,
ऊँचा तुम्हारा धाम है।
जिसकी तुलना ही न हो,
तुलसी तुम्हारा काम है।

(५)

छट गईं काली घटायें,
मिट गये सारे भरम।
हर तरफ दीखने लगा,
सत्यम् शिवम औ' सुन्दरम्।
योग से, जप से, तपस्या
से, न पहुँचे थे मुनी।
भक्ति से ही मिल गया
तुमको परम पद, उच्चतम।
सत्य के रूख से हटी घूंघट,
तो देखा राम है।
यह करिश्मा है गजब,
तुलसी तुम्हारा काम है।

(६)

सत्य के पथ पर मुसाफिर,
दो कदम आगे हुए।
धर्म पर फिर लौट आए,
धर्म से भागे हुए।
खींच लाया स्वर्ग को,
तुमने निकट इन्सान के।
सो गए दुष्कर्म जितने,
दिल में थे जागे हुए।
दिल प' 'द्रोही' के भी अंकित,
राम का इक नाम है।
काठ पर मोती जड़ा,
तुलसी तुम्हारा काम है।

होके रहा

(१)

काटे न कटीं विरही रातें,
पर फिर भी सवेरा होके रहा।
तुम प्राण मेरे, मेरे न हुए,
पर मैं तो तुम्हारा होके रहा।

(२)

एक नजर का प्यासा जलनिधि,
पूनम बंदी घन पाशों में।
पर फिर भी लहरें उठके रहीं,
औ' फिर भी नजारा होके रहा।

(३)

इश्क में लुटने को मैं लुटा,
पर सच पूछो तो लुट न सका।
ये आँसू मीठे बनके रहे,
औ' ग़म भी दुलारा होके रहा।

(४)

धरती नीचे फैली-फैली,
औ' ऊपर विस्तृत नील गगन।
बनने को बना इक नीड़ नहीं,
पर फिर भी गुजारा होके रहा।

(५)

था एक बसेरा उजड़ गया,
आशा के धागे टूट गये।
जीते जी जीवन से भागा,
वह आज सहारा होके रहा।

(६)

जब आँखें फिर से चार हुईं,
तब टूट गईं कसमें सारी ।
आँखों में छलक आया जिगर,
फिर तुमसे इशारा होके रहा ।

(७)

कह न सका ज़ालिम से व्यथाएँ,
औ' अपने को समझा के थका ।
जो होना था वह हो ही गया,
दिल पारा-पारा होके रहा ।

(८)

नाच रही मौजों पर नौका,
दूर किनारा, अल्हड़ माँझी ।
त्यौहार बनी, अंतिम घड़ियाँ,
मझधार किनारा होके रहा ।

(९)

सब अपने, न पराया कोई,
प्रेम जगत की रीति अनोखी ।
सीने में पला जो गैरों के,
वह दर्द हमारा होके रहा ।

गजल

(१)

किसने यह तबियत डाली है?
सँभली, न सँभलने वाली है।

हर सूरत पै मचल जाती है,
हर शमा पै जलने वाली है।

(२)

सुनता हूँ इधर से गुजरेंगे,
खिल जायेंगे गुल खुशनसीब।

सजदे उठ-उठ पद चूमेंगे,
रिंदों ने आँख बिछा दी है।

(३)

खाली सागर, शीशा खाली,
पर आँख बनी है मयखाना।

आँखों-आँखों में साकी, क्या
मय आज छलकने वाली है?

(४)

अपनी रातें काली-काली,
उनकी हर इक रात दिवाली।

कहना सुनना क्या हासिल है,
जब बात न बनने वाली है।

(५)

आँखें नम, दिल बैठा-बैठा
प्यार की दुनिया सूनी-सूनी।

उनसे और उम्मीद वफा की,
छोड़ो भी, खाम ख्याली है।

(६)

सामना उनका कौन करेगा,
सुनता हूँ, बहुत मगरूर है।
फिर भी, उन पर आँखें उठतीं,
क्या शामत आने वाली है?

(७)

माना, बिजली नहीं गिरेगी,
तूफां नहीं उठेंगे, तो भी,
खतरा मोल नशेमन मत ले,
कट जाने वाली डाली है।

(८)

साकी कहाँ, कहाँ दीवाने,
है खाली-खाली मयखाना।
यारे उठ-उठ चले गए, अब,
महफिल ये उजड़ने वाली है।

(९)

नाजुक हाल मरीज गमीहा,
आखिर दम अब तोड़ रहा है।
छू नहीं जाये देखो सीना
बिजली सी इसने पाली है।

(१०)

राहे-मुहब्बत, काँटे--काँटे,
मोड़-मोड़ पर खड़ी मुसीबत।
गम की धुंधली गलियाँ 'योगी',
क्या तुमने शमा जला ली है?

मुक्तक

(१)

भगवान हमें हिन्दू बनाता, न मुसलमान बनाता ।
था बनाना जो जरूरी, तो बस इन्सान बनाता ।
हुस्नवालों को बनाता तो मेहरबां न सितमगर ।
दिल अमीरों को यहां, कम से कम ईमान बनाता ।

(२)

गम गरीबी का नजर तुमको न आये, तो नजर को बदलो ।
बन चुके चित्र बहुत महलों के, कलाकार हुनर को बदलो ।
ऐ कलम, जाग उठो, देख रही तुमको हजारों आंखें ।
दिल हुकूमत का बदल डालो, वजीरों के जिगर को बदलो ।

(३)

शबे पीरी में ख्वाबे नौजवानी देखने वालो ।
कोहिस्तानों में मौजों की रवानी देखने वालो ।
गजब यह शौक बीनाई, यह दानिश, यह समझदारी,
बुताने संग दिल की मेहरबानी देखने वालो ।

(४)

खिंची लकीर से बढ़कर महे कामिल है बना ।
कतरा लहू का जो बहका वही दिल है बना ।
असर दुआ का मेरी, कि आह की, यह कुदरत है ।
कि कल जो कातिल था, वही आज बिस्मिल है बना ।

(५)

गुलहाय नौ बहार खिले, पहले पहले ।
सबा चली, अशजार हिले, पहले पहले ।
मिलने को हम तुम सौ बार मिले, लेकिन,
जब भी मिले, हर बार मिले, पहले पहले ।

(६)

अच्छा है, जवानी में निखर आया तू ।
तूफ़ानों की अदाओं से उभर आया तू ।
कौन पहचाने फिरे काशी में, मदीना में,
भारती की निगाहों में उतर आया तू ।

(७)

ऐ चाँद ! तेरे आँगन में सितारे हैं बहुत ।
चुप है, मगर आपके इशारे हैं बहुत ।
महफ़िल से मेरे साकी को निकाले जाते ।
अच्छा है, बेचारे कि सितारे हैं बहुत ।

(८)

जमाना तू, फलक भी तू, जमीं भी तू ।
तू ही हरसू मकीं भी, लामकीं भी तू ।
किसी से है जो पर्दा, आह ! मुझसे है,
जहाँ मैं हूँ, वहाँ शायद नहीं भी तू ।

(९)

मयेनाब हो, कि जहर हो, पीना ही पड़ेगा ।
मरना है, तो मरना है, जीना ही पड़ेगा ।
तकदीर की चादर को फाड़ चुके, फिर भी,
आगे है वही करना, सीना ही पड़ेगा ।

(१०)

सीधे सवालों के अटपट जवाब होते हैं ।
आजाद रसायन् से हुस्नो शबाब होते हैं ।
बेचाह जो रहते हैं, उनसे नही पर्दा तेरा ।
दीदार के बन्दों से कितने हजाब होते हैं ।

गज़ल

दुआ से मगज़ा का काम हो जाए।
दवा से दर्द आराम हो जाए।

जो मेरा उनसे कलाम हो जाए।
ग़म का क़िस्सा तमाम हो जाए।

मेरा जीना है इसलिए वाजिब।
कि तेरा कोई काम हो जाए।

और मरना भी है नहीं बेजा।
कि कुछ तो तेरा ना हो जाए।

इश्क चाहे तो क्या-क्या न करे।
हुस्न आला मुक़ाम हो जाए।

तुम नहीं तो अरे कुछ नहीं बाक़ी।
अभी है सुबह, अभी शाम हो जाए।

मेरी खुदी है तेरा परदा है।
वरना जलवा तेरा आम हो जाए।

निगाहे लुत्फ़ जिधर फेर दे तू।
हर कतरा उठे औ' जाम हो जाए।

अजीब शान है यार की 'योगी'।
कि सारी कुदरत गुलाम हो जाए।

गजल

जलने को इश्क में जले तुम भी तो कोई कम नहीं !
तुम हो कि तुम तुम्हीं रहे, हम हैं कि आज हम नहीं !!

हमको शिकायतें कहा—तुमको हमारा ग़म नहीं !
ऐसा कभी नहीं हुआ—तुमने किये सितम नहीं !!

अरमाँ हों जिसके जल चुके, आखिर फलक से क्यों डरे !
जिसकी खुदी हो मिट चुकी, चलता सहम-सहम नहीं !!

दुनिया तुम्हारे इल्म की, दस्ताँ, बहुत बड़ी, मगर !
उससे बड़ी बेरहमियाँ, जालिम, तुम्हारी कम नहीं !!

एक भी दर्द कम नहीं, रौशन हुआ न एक दिल !
यों तो किताब में पड़े हैं, फिलसफे भी कम नहीं !!

ऊँची इमारतों से तुम देखा किये गरीब को !
कोई कराहता रहा, फिर भी उठे कदम नहीं !!

आहों का क्या असर वहाँ, नालों की क्या गुजर उधर !
सीने में हो जहाँ न दिल, दिल में जहाँ हो गम नहीं !!

वह भी कोई है जामे दिल, छलके न जिससे दर्दो ग़म !
कहने को आदमी बने, आँखें तुम्हारी नम नहीं !!

तुम हो कि चल पड़े कहीं, दिल की हैं मंजिलें दिगर !
'योगी' मगरूरी इल्म के उठते उधर कदम नहीं !!

—:०:—

गजल

इस चमन में बहार, तुमसे है ।
इश्क का कारबार, तुमसे है ।

एक खुशी, गम हजार, तुमसे है ।
क्यों कर कहूँ, करार तुमसे है ।

जिन्दगानी का क्या भरोसा है ।
कुछ मगर एतबार तुमसे है ।

क्या तलब तुम्हीं से करना है ।
वह दिल जो सोगवार तुमसे है ।

सागर में, न कुछ शराब में है ।
तुमसे निगा, खुमार तुमसे है ।

इश्क भी और खुद्दारी भी ।
ये शिकवा दिले यार तुमसे है ।

इश्क के बेपनाह सहरा में ।
एक खयाले आबशार तुमसे है ।

मौसमे बहार बात है वरना ।
ये दुनिया तरहदार तुमसे है ।

ऐ कारवाने मुहब्बत बढ़ो,
मंजिल उम्मीदवार तुमसे है ।

रीन्द तो रीन्द शेख भी शायद,
इश्क का गुनहगार तुमसे है ।

बात अपनी न सुनाओ 'योगी'
हर शख्स होशियार तुमसे है ।

ग़ज़ल

मैं दिल को कभी समझा न सका,
दिल उनपर असर कोई ला न सका।

वह याद मुझे कभी कर न सके,
मैं उनको कभी भी भुला न सका।

वह प्यार की रीति समझ न सके,
मैं दिल की लगी को बुझा न सका।

जो दर्द उठा, उठता ही गया,
जो ठेस लगी, सहला न सका।

जो चाहा छिपाना, छिपा न सका,
कुछ भी तो मगर बतला न सका।

जहर के प्याले पीगे, तो पीये,
पीकर के मगर, मुस्कुरा न सका।

वह प्यार की दुनिया क्या जाने,
जो मौत से आँख मिला न सका।

अरमाँ जो लगे जलने दिल के,
कभी हँस न सका, कुछ गा न सका।

सुख त्याग दिया, सपने फूँके।
पर अपना अलख, मैं जगा न सका।

जो यार को 'योगी' भा जाता।
वह लब पर तराना आ न सका।

गजल

बात अपनी बहुत अनसुनी रह गईं,
दास्तां दर्द की अनकही रह गईं।

राज नजरों का उनकी न अब तक खुला;
क्यों मिलीं, क्यों फिरी, क्यों झुकी रह गईं ?

लाख पाबन्दियाँ, और आजाद दिल,
बेकसी जिन्दगी की तनी रह गई।

हाय ! कमजोरियाँ आह ! उठ न सकीं,
रहमतें थी उतरती, टंगी रह गईं।

ढूंढने तुमको राहें बहुत चल पड़ीं,
पर जहाँ से चली थीं, वहीं रह गईं।

जुल्फ तेरो सँवरती, बिखरती रही,
जो तमन्ना बंधी थी, बंधी रह गई।

आखरी बार आँखें खुली देखने,
तुम न आये, खुली की खुली रह गईं।

अक्ल की डोरियाँ थाह लेने चलीं,
दिल की गहराइयाँ, मापती रह गईं।

रोशनी दिल की 'योगी' तुम्हीं तक रही,
जो जलाते शमा, अनजली रह गईं।

—:][:—

शुद्धिकरण-पृष्ठ

पेज	लाइन	अशुद्ध	शुद्ध
७	१	घर	घट
७	६	कितना सीधा	कितना था सीधा
७	८	क्रूर	क्रूर
१६	७	मानती	मानिनी
१६	१६	सुनी	सुनी
२०	७	सुरासर	सुरासुर
२२	२१	आन	तान
३२	१	क्या	कहाँ
४१	१४	साज-सजा	साज सजा
४६	१२	सूना	सुना
४७	१ और २	बतालाओ	बतलाओ
४७	१६	जाया अपना	जामा हम अपना
४६	१५	गोखले	गोखले
५१	७	इन	इस
५२	११	शहीदो की खूं	शहीदों के खूं
५३	३	भाव	माल
५३	६	जगाई	जगा
५४	१४	सत्यकार	सतकार
५४	१५	नदी की काल भंवर	नदी के काल भंवर
५४	२२	गोलियों	गलियों
५६	४	फिरा,	फिरा मैं,
५६	१५	नियम पावन	नियम का पावन
५८	१०	को हुक्म	को बस हुक्म
६०	७	मुझे	मुझको
६१	२४	तूफान की	तूफान, कि
६४	२१	प्रदीप	प्रदीप्त
६६	२०	मंद	मूँद
७२	१८	मुमको	मुझको
८३	१३	खिची	खिची
८७	६	शराव	शराब

प्रथम संस्करण, अप्रील १९७८

थोक विक्रेता :—

राजकमल प्रकाशन

साइन्स कालेज के सामने

पटना–६

मूल्य :—

लाइब्रेरी एडीशन—१०)

पेपर बाइन्डिंग — ८)